पराग

अंक २३२ : अगस्त १९७७

खेल विशेषांक



इस बार

[illegible] कहानियाँ

[illegible] उपन्यास

[illegible] लेख और परिचय

कविताएँ

[illegible]

सम्पादक
[illegible] नंदन
सह सम्पादक
[illegible] गुप्त
[illegible]
[illegible] आनंद
सज्जा : [illegible]

प्यारे प्यारे पाठको,

खेल केवल हार-जीत के लिए नहीं, खेल की भावना के साथ खेले जाने चाहिए. इस तरह खेलों के जरिये हमारा समूचा जीवन सुखी किया जा सकता है. इसी को दृष्टि में रखकर इस महत्वाकांक्षा किंतु पर हम यह खेल विशेषांक तुम्हें दे रहे हैं.

इस अंक से तुम्हें 'पराग' की कीमत थोड़ी अधिक देनी होगी. कागजों की लागत अन्य सभी पत्रिकाओं ने अपना दाम सवा पहले कर दिया था. हमने कई महीने इस होड़ से अपने को बचाये रखा. लेकिन अब मजबूर होकर हमें भी दाम बढ़ाना पड़ रहा है. लेकिन इसके बदले में हम और अधिक पाठकों की सेवा में तत्पर हो रहे हैं, अच्छा कागज लगाने जा रहे हैं, मुखपृष्ठ का आकार और अच्छा कर रहे हैं और तुम्हारे लिए और अच्छा 'पराग' दिया जा सके, इसकी कोशिश जारी बराबर करते रहेंगे. अब लो, यह विशेषांक पढ़ो और हमें लिखो कि कैसा लगा. अपने सुझाव भी लिखना.

तुम्हारा शुभचिन्तक

खिलाड़ियो तुम धन्य हो, तुम घृणा के बदले प्रेम बांटते हो, तुम लड़ाई के मैदान को खेल का मैदान बना सकते हो.

-पोप पॉल



हार में जीत

□ धनंजय शाह

एक था लड़का. उसका नाम था नयन. उम्र यही तेरह-चौदह की. लंबा कद, मजबूत शरीर, ऊंचे हौसले. बोलता कम, काम ज्यादा करता. खेलकूद का उसे बेहद शौक; कबड्डी, खोखो, क्रिकेट, हाकी—सभी पर उसका एक जैसा अधिकार.

पाठशालाओं के बीच खेलकूद की जितनी भी प्रतियोगिताएं होतीं, उनमें नयन जरूर भाग लेता. अब तक वह अनेक पुरस्कार जीत चुका था. कबड्डी का तो वह नामी खिलाड़ी था. लंबी सांस खींचने और टिकाव रखने की उसमें अनोखी ताकत थी. कहावत ऐसी कि खिलाड़ी भी पानी भरें. सामने की टुकड़ी का खिलाड़ी एक बार उसकी गिरफ्त में आया नहीं कि छूटना मुश्किल. समझ लो कि लोहे का शिकंजा बन गया.

अपनी बारी आने पर नयन अच्छी तरह सांस खींचकर, धीमे-धीमे 'कबड्डी' बोलता हुआ, सामने की टुकड़ी में घुस पड़ता. जितनी देर में पलक झपकती है, उतनी देर में तो वह न जाने कितनों को छू लेता और पलट आता और निकल भागता. एक-एक बारी में वह तीन-तीन, चार-चार जनों को आउट कर देता.

कभी-कभी ऐसा भी होता कि सामने के किसी खिलाड़ी ने नयन को घेरकर दबोच लिया. लेकिन नयन उस खिलाड़ी को समूचा ही उठाकर, 'हुतुतु-हुतुतु' करता, अपनी



टुकड़ी में लौट आया।

ऐसी चपलता और इन्हीं गुणों के कारण उसे टुकड़ी का नायक बना दिया गया था—कप्तान साहब! खेलकूद के मामलों में वह अपनी पाठशाला की नाक समझा जाता था.

उस साल राज्य की पाठशालाओं के बीच जो प्रतियोगिताएं हो रही थीं, उनमें से एक का किस्सा सुनो.

एम्पायर की सीटी बजते ही नयन और उसकी टुकड़ी मैदान में उतर आयी. प्रतियोगी टुकड़ी भी मैदान में आकर सामने खड़ी हो गयी.

नयन ने सावधानी के साथ मोर्चाबंदी करके अपने खिलाड़ियों को खड़ा कर दिया. कबड्डी प्रतियोगिता शुरू हो गयी.

इस बार की प्रतियोगिता वास्तव में कठोर थी. दोनों टुकड़ियां एक से बढ़कर एक दांव खेल रही थीं. शक्ति और चपलता की किसी में कमी नहीं थी. दोनों टुकड़ियों को लगभग बराबर पाइंट मिलते जा रहे थे.

खेल के आखिरी राउंड में एक जबर्दस्त घटना घटी.

'हुतू-तुतू' करता नयन बिजली जैसी चपलता से सामने की टुकड़ी में घुसा आ रहा था.

सामने की टुकड़ी का कप्तान नयन का अद्भुत खेल देखकर अत्यंत सावधान हो उठा था. नयन को धर दबोचने का मौका वह बड़ी आतुरता से ढूंढ रहा था. मैदान की विभाजक रेखा के पास वह बायीं तरफ खड़ा था. नयन ने भी भांप लिया था कि सामने का कप्तान कोई मामूली खिलाड़ी नहीं, दांव-पेंच का वह पक्का जानकार है. इसीलिए नयन हमेशा उस ओर जाने से बच जाया करता, जिधर सामने का कप्तान खड़ा रहता.

लेकिन इस बार कप्तान ने भी आर या पार का फैसला कर रखा था. इसीलिए नयन ज्यों ही उसकी तरफ पर्याप्त गहराई में आया, त्यों ही उसने एक लंबी छलांग लगायी. जंगल में लापरवाही से खड़े शिकार पर जिस तरह चीता छलांग लगाता है, उसी तरह उसने अचानक ऐसा आक्रमण किया कि जिसके लिए नयन भी तैयार नहीं था. कप्तान के धक्के से वह जमीन पर गिर पड़ा. हुतू का उसका जाप तो खैर जारी था ही, ज्यों ही वह गिरा त्यों ही उस पर एक नहीं, अनेक खिलाड़ी टूट पड़े.

नयन ने देखा कि अगर सांस टूट गयी, तो विजयी होने की उसकी टुकड़ी की तमाम आशाएं धूल में मिल जायेंगी. उसने शरीर की सारी ताकत इकट्ठी करके बीच की रेखा की तरफ सरकने का प्रयास किया.

प्रतियोगी कप्तान ने नयन की कमर को बहुत कसकर पकड़ लिया था. नयन चारों

झंडा ऊंचा रहे हमारा



तरफ से घिर चुका था. इसके बावजूद वह वीर अभिमन्यु की तरह डटा हुआ था. उस के फेफड़ों में अभी भी इतनी सांस थी कि वह आसानी से 'हुतू' बोल सकता था.

मैदान को घेरकर खड़े दर्शक अधीर हो उठे. उनकी उत्सुकता सीमा पार करने लगी. हार-जीत का सारा दारोमदार नयन पर ही था. नयन की पाठशाला के विद्यार्थी और शिक्षक, जो वहां खड़े थे ; 'कम-आन कम-आन!', 'शाब्बाश!', 'निकल आ!', 'लगा जोर!' के नारे लगा कर नयन को जोश दिला रहे थे.

बीच की रेखा से नयन अब थोड़े ही सेंटीमीटर दूर रह गया था. सिर्फ एक झटके की कसर थी—और उसका हाथ रेखा को छू लेगा. ज्यों ही ऐसा होगा, नयन की पाठशाला की जीत पक्की हो जायेगी.

लेकिन—

प्रतियोगी टुकड़ी के छह-छह खिलाड़ी मिल कर नयन को पीछे खींच रहे थे.

बेचारा एम्पायर फैसला ही नहीं कर पा रहा था कि नयन की सांस चालू है या नहीं. प्रतियोगी खिलाड़ियों ने सभी तरफ से नयन को इस प्रकार घेर लिया था कि एम्पायर की नजर नयन के मुंह तक पहुंच ही नहीं पा रही थी.

उसी समय नयन ने जोरों से तड़प कर कोशिश की और उसका हाथ बीच की रेखा तक पहुंच गया!

इसके साथ ही नयन की पाठशाला के तमाम विद्यार्थी, शिक्षक, खेल-शिक्षक और आचार्य आनंद की किलकारियां लगाने लगे.

लेकिन सामने के कप्तान ने एम्पायर से कहा कि बीच की रेखा को छूने से पहले ही नयन की सांस टूट गयी थी.

बेचारे एम्पायर को समझ में न आया कि फैसला किस प्रकार करे. आखिरी मौके पर उसकी नजर नयन पर टिकी ही कहां रह सकी थी? नयन तो हर तरफ से दबा पड़ा था.

दूसरी तरफ नयन के दोस्त और पाठशाला के विद्यार्थी हिप-हिप हुर्रे के नारे लगा-लगा कर आकाश गुंजा रहे थे.

यह एम्पायर की जिम्मेदारी थी कि निर्णय सच्चा ही लिया जाये. प्रतियोगी टुकड़ी के कप्तान को वह सच्चा और निष्पक्ष उत्तर देना चाहता था. एम्पायर पल-दो-पल चकित-सा खड़ा रह गया.

ठीक उसी समय, जमीन पर से उठ चुका नयन कुछ कहने की कोशिश करने लगा. एम्पायर ने यही समझा कि वह अपनी सफाई पेश करना चाहता है. उसने नयन को इशारे से ही चुप कर दिया.

खेल इतनी तेजी के साथ खेला गया था कि बीच की रेखा पर हाथ रखने से पहले नयन की सांस उखड़ गयी थी या नहीं, इसका सही जवाब तो सिर्फ नयन ही दे सकता था. आखिर एम्पायर ने भी उसी को एक तरफ बुला कर पूछा कि असलियत क्या थी.

परम शांति से और अत्यंत गौरव के साथ नयन ने कहा, "सर, कब से मैं आप को यही तो बताना चाह रहा हूं! आप मुझे बोलने का मौका ही नहीं दे रहे. मुझको भी नहीं थी कि आपने इशारे से चुप कर दिया. सच बताऊं, सर? मैं हार गया हूं. रेखा छूने से पहले मेरी सांस उखड़ गयी थी. मैं अपनी टुकड़ी की हार स्वीकार करता हूं."

नयन के इन शब्दों को सुन कर प्रति-

(शेष पृष्ठ ९८ पर)



मीर फिद्दन तांगा मैच में

□ के. पी. सक्सेना

छाया : के. पी. गुप्ता

तो भई, हमारे लखनऊ में, जिसे नंदन भैया खलीफा तरबूजों का शहर कह कर हमारा सीना चौड़ा कर देते हैं, एक मुहल्ला है चौक. वही चौक जहां बच्चों-बूढ़ों के मनचाहे कथाकार पं. अमृतलाल नागर रहते हैं, वही चौक जहां के मशहूर रामआसरे हलवाई देसी घी में इमरती उतारते हैं तो खुशबू मुरादाबाद तक जाती है; वही चौक जहां आसफुद्दौला का मशहूर इमामबाड़ा है.

इसी चौक में बरसों से तांगों का मैच होता आ रहा है. तांगों के मैच का यह मतलब नहीं कि घोड़े फुटबाल खेलते हैं. तांगों की दौड़ हुआ करती है लखनऊ से मलीहाबाद तक.

इसी चौक में बरसों पहले मीर फिद्दन साहब रहा करते थे. जिनके पास एक मरियल-सा घोड़ा और खचर-पचर तांगा था. मीर फिद्दन बेचारे दुबले-पतले सींक-सलाई, साल में बारहों महीने जुकाम रहता था और नाक पिच-पिच सदियल हारमोनियम जैसी बजती रहती थी. बोलते थे तो बिला वजह हर शब्द के साथ टें-टें जुड़ी रहती थी और घोड़े को घोड़ा कहते थे. न जाने किस शौक में अपने फटीचर घोड़े का नाम 'लल्ला शहजादे' रख छोड़ा था. हालत यह थी कि मरियल घोड़े के जिस्म के सारे कल-पुर्जे चलते वक्त खटर-पटर बोलते थे.

मीर फिद्दन और लल्ला शहजादे दोनों ही बूढ़े हो चले थे, मगर दोनों में से किसी की शादी नहीं हुई थी. दोनों को यही दुख था कि कुंवारे ही मर जायेंगे. मीर फिद्दन नाक से बोलते थे, सो किसी घर से रिश्ता नहीं आया. लल्ला शहजादे की दुम कुल टोटल साढ़े चार इंच थी, सो घोड़ियों ने उनके साथ निकाह करने से इन्कार कर दिया.

मैच का दिन आ पहुंचा. एक से एक तगड़े घोड़े-घोड़ियां और चमचमाते तांगे लाल फुंदनों से सजे तैयार खड़े थे.

तभी लोगों की हंसी छूट गयी. मीर फिद्दन अंग्रेजी शान में भारी-भरकम नेकर पहने, टाई बांधे अपने खटर-पटर तांगे पर चले आ रहे थे. लल्ला शहजादे

के कान और पैर फूंकनी से सजे हैं. आते ही बोले— 'भाई, हमारा नाम भी लिखो! लल्ला शहजादे को एक बाल्टी मुनक्के का रस ग्लूकोज डाल कर पिलाया है, हां! हीरा चौक से सरपट लेगा तो नई दिल्ली के पहले थकने का नाम नहीं लेगा. बजाओ अपनी सीटी! हां!'

●

दौड़ शुरू हुई! तांगे आंखों से ओझल हो गये. लल्ला शहजादे अभी वहीं खड़े मुंह बना रहे थे! फिर धीरे-धीरे चले. दोपहर बारह बजे तांगों को लौटना था. सैकड़ों देखने वाले सड़क पर आंखें बिछाये थे कि फर्स्ट कौन आता है.

ठीक बारह बजे देखते क्या हैं कि लल्ला शहजादे अपने तांगे समेत टपाटप दौड़ा चला आ रहा है. मीर फिद्दन नेकर उचकाये तांगे के पीछे-पीछे दौड़े चले आ रहे हैं. चौक के पास आते-आते मीर फिद्दन उचक कर तांगे पर सवार हो गये और बाजी जीत ली. हारने वालों ने स्वीकार किया कि मीर फिद्दन सचमुच ही मलीहाबाद तक गये थे जानकर सभी अचंभे में थे.

बाद में अपने मिले-जुले दोस्तों को मीर फिद्दन ने जीतने का रहस्य बताया — 'भई हम बहुत पीछे थे! अचानक एक तरकीब भेजे में आ गयी. हमने धीरे से घोड़े के कान में कहा कि बेटा लल्ला शहजादे, अगर यह रेस जीत गये, तो तुम्हारा निकाह (शादी) मिर्जा नफ्फन की घोड़ी 'ओल्ड क्वीन' से करवा देंगे, हां!' घोड़े ने हमारे कान में कहा कि अगर हम साथ-साथ दौड़ेंगे तो वह ऐसी धूल उड़ा देगा कि हमारा निकाह भी बीबी पोपसी से हो जायेगा! बस! शादी-ब्याह का नाम सुनते ही घोड़े को हवा लग गयी और हमारी मीर फिद्दन पावर ओढ़ गयी हो गई! कभी घोड़ा आगे, कभी हम आगे! रेस जीत गये! मिर्जा नफ्फन अपनी घोड़ी की शादी पर रेडी हो गये हैं. अल्ला ने चाहा तो हमारी भी हो जायेगी! हें हें हें!'

हंसते-हंसते लोगों के पेट में बल पड़ गये. मीर फिद्दन की शादी हुई या नहीं, पता नहीं. मगर चौक की चक्की वाली कोठी से तांगों की दौड़ अब भी हर साल होती है.

176/11-गुईन रोड लखनऊ-1





सवाल तुम्हारे जवाब हमारे

- सुभाष कुमार, शेरघाटी (गया).
- कहते हैं कर्म करते जाना चाहिए, एक दिन उसे सफलता जरूर मिलेगी. किन्तु मैं 'पराग' में बराबर पत्र भेजता हूं. लेकिन एक पत्र भी 'पराग' में नहीं छपा है, क्या कारण है?
- गीता के अनुसार बिना फल की चिंता किये जो कर्म किया जाता है, वह सफलता देता है.

- चिरंजीवलतारा भारती, छतरपुर.
- चाचाजी, मैं आपके दर्शन आंटी जी के साथ करना चाहता हूं. कहिये आप किस गली में मिलेंगे?
- एक बार एक पाठक महोदय इसी तरह बुला चुके हैं और हम सवालोंका गच्चा खा चुके हैं.

- विजय कुमार चौधरी, गया.
- जिस व्यक्ति का जन्म २९ फरवरी को हुआ है और जिस साल फरवरी २८ दिन की होती है, उस साल वह व्यक्ति अपना जन्म दिन किस तारीख को मनायेगा?
- चार साल के पहले कोई चांस नहीं. प्रधानमंत्री मोरारजी भाई अब तक कुल १९ जन्मदिन मना सके हैं.

- अशोक सिंघी, अमलांडी (कर्नाटक).
- लड़के-लड़कियों को फिल्मी गीत जल्दी याद हो जाते हैं, लेकिन पाठ याद नहीं होते, ऐसा क्यों?
- पाठ में लक्ष्मीकांत-प्यारेलाल या राहुलदेव बर्मन का संगीत नहीं होता न!

- नवरतन प्रसाद वर्मा 'दोस्त' (सोना बाजार).
- आपका दिल कभी टूटा या नहीं?
- दिल अभी पूरी तरह टूटा नहीं, दोस्तों की मेहरबानी चाहिए.

पुरस्कृत प्रश्न

- बसंत कुमार कपूर, सरैयागंज, सिकंदरपुर रोड, मुजफ्फरपुर.
- गिरे हुए पैसों को उठाने में लोग शर्मिंदा नहीं होते लेकिन गिरे हुए इंसानों को उठाने में शर्म महसूस करते हैं, क्यों?
- गिरे पैसे उठाने में किसी बल की जरूरत नहीं होती. गिरे इंसान को उठाने में चरित्र बल की बेहद जरूरत होती है. वह कम लोगों के पास होता है, इसलिए शर्म महसूस होती है.

बदला तो मैंने भी लिया था

□ मेजर ध्यानचंद

खेल के मैदान में आये दिन धक्का-मुक्की और मारधाड़ की घटनाएं होती रहती हैं. खेल में तो यह सब चलता ही है. जिन दिनों हम खेला करते थे, उन दिनों भी यह सब चलता था. तो आओ, मैं आज आपको अपने जीवन की एक दिलचस्प घटना सुनाता हूं.

सन् १९३३ की बात है. उन दिनों मैं पंजाब रेजीमेंट की ओर से खेला करता था.

एक दिन पंजाब रेजीमेंट और सैपर्स एंड माइनर्स टीम के बीच मुकाबला हो रहा था. माइनर्स टीम के खिलाड़ी मुझ से गेंद छीनने की कोशिश करते, लेकिन उनकी हर कोशिश बेकार जाती. इतने में एक खिलाड़ी ने गुस्से में आकर हाकी मेरे सिर पर दे मारी. मुझे मैदान से बाहर ले जाया गया.

थोड़ी देर बाद मैं पट्टी बांधकर फिर मैदान में आ पहुंचा. आते ही मैंने उस खिलाड़ी की पीठ पर हाथ रखकर कहा, 'तुम चिन्ता मत करो, मैं इसका बदला जरूर लूंगा.' मेरे इतना कहते ही वह खिलाड़ी एकदम घबरा गया. अब वह हर समय मुझे ही देखता रहता कि मैं कब उसके सिर पर हाकी मारने वाला हूं. मैंने एक के बाद एक झटपट छह गोल कर दिये. खेल खत्म होने के बाद मैंने फिर उस खिलाड़ी की पीठ थपथपायी और कहा— 'दोस्त, खेल में इतना गुस्सा अच्छा नहीं लगता. मैंने तो अपना बदला



ऊपर : हाकी के जादूगर ध्यान चंद (बायें) प्रसिद्ध हाकी खिलाड़ी कुं. दिग्विजय सिंह बाबू के साथ. बाबू 1952 ओलिंपिक में भारतीय हाकी टीम के कप्तान थे. सामने पृष्ठ पर : मेजर ध्यानचंद (बायें) हाकी सिखा रहे हैं.

छाया : एम. एम. अग्रवाल

से ही लिया है. अगर तुम मुझे हाकी न मारते तो मैं तुम्हें शायद दो ही गोलों से हराता.' वह खिलाड़ी सचमुच बड़ा शर्मिंदा हुआ. तो देखा आपने मेरा बदला लेने का ढंग. सच मानो, बुरा काम करने वाला आदमी हर समय डरता रहता है कि उसके साथ भी बुराई की जायेगी.

आज मेरी उम्र लगभग ७२ वर्ष की है. जहां भी जाता हूं, छोटे-छोटे बच्चे अक्सर मुझे घेर लेते हैं और मुझसे मेरी सफलता का राज जानना चाहते हैं. मेरे



... सफलता का कोई मूलमंत्र भी है, नहीं. हर किसी से यही कहता हूं कि लगन, साधना और खेल-भावना यही सफलता के मूलमंत्र हैं.

मुझे ही देखिए. मेरा जन्म 1905 को प्रयाग में एक साधारण राजपूत परिवार में हुआ. बाद में हम झांसी आकर बस गए. 16 साल की उम्र में मैं 'फर्स्ट ब्राह्मिन रेजिमेंट' में एक साधारण सिपाही के रूप में भर्ती हो गया. उस समय तक मुझे खेल में कोई दिलचस्पी नहीं थी. लेकिन मेरी रेजिमेंट का हाकी के खेल में बहुत नाम था. उस समय हमारी रेजिमेंट के सूबेदार मेजर तिवारी थे. वह बार-बार मुझे हाकी खेलने के लिए कहते. हमारी छावनी में हाकी खेलने का कोई निश्चित समय नहीं था. सैनिक जब चाहे मैदान में पहुंच जाते और खेलना शुरू कर देते. उस समय मैं एक नौसिखिया खिलाड़ी था.

जैसे-जैसे मेरे खेल में निखार आता गया, वैसे-वैसे मुझे तरक्की भी मिलती गयी. 1936 में बर्लिन ओलिंपिक में मुझे टीम का कप्तान बनाया गया. उस समय मैं सेना में लांस नायक था. बर्लिन ओलिंपिक में लोग मेरे हाकी खेलने के ढंग से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने मुझे 'हाकी का जादूगर' कहना शुरू कर दिया. इसका यह मतलब नहीं कि सारे गोल मैं खुद ही करता था. मेरी तो हमेशा यह कोशिश रहती कि मैं गेंद को गोल के पास ले जाकर अपने किसी साथी खिलाड़ी को दे दूं, ताकि उसे गोल करने का श्रेय मिल जाए. अपनी इसी खेल-भावना के कारण मैं [illegible] का दिल जीत लिया था. लोग कहते हैं

उसने किसी अधिकारी से यह पूछा था कि यह खिलाड़ी भारतीय सेना में किस पद पर है. जब उन्हें यह मालूम हुआ कि मैं लांस नायक हूं तो उन्होंने अपने उस अधिकारी से कहा कि उनसे कहो कि वह जर्मनी आ जायें, मैं उन्हें मार्शल बना दूंगा.

बर्लिन ओलिंपिक में हमें स्वर्णपदक तो मिला ही, लेकिन हिटलर ने अपनी ओर से मुझे एक पदक भी दिया था. इस से बड़ा गौरव का क्षण किसी खिलाड़ी के लिए और क्या हो सकता है.

अपने जीवन की एक महत्त्वपूर्ण घटना और बताता हूं. १९३६ की बात है. बर्लिन ओलिंपिक हाकी के फाइनल में हमारा जर्मनी से मुकाबला था. मन में एक अजीब-सी दहशत थी. दहशत इसलिए भी थी कि हम एक अभ्यास मैच में जर्मनी से १-४ से हार चुके थे.

१५ अगस्त की सुबह टीम के सारे खिलाड़ी अपने 'ड्रेसिंग रूम' में इकट्ठे हुए. उस समय हमारी टीम के मैनेजर श्री पंकज गुप्ता थे. उन्हें खिलाड़ियों का हौसला बढ़ाने की अचानक एक तरकीब सूझी.

उन्होंने खिलाड़ियों के सामने तिरंगा झंडा रख दिया. मानो यह कह दिया हो कि अब इस झंडे की लाज तुम्हारे हाथ है. हम सभी खिलाड़ियों ने झुककर झंडे को शाही सलामी दी. उसके बाद हम लोग उस झंडे की लाज रखने के लिए मैदान में वीर सैनिकों की तरह उतरे. हम लोग जमकर खेले और ८-१ से विजयी हुए. उस दिन सचमुच तिरंगे झंडे की लाज रह गयी. उस समय कौन जानता था कि १५ अगस्त ही भारत का स्वाधीनता-दिवस बनेगा.

खेलते समय मैं हमेशा इस बात का ध्यान रखता था कि हार या जीत मेरी नहीं, बल्कि पूरे देश की है. हाकी तो आज भी मेरी रग-रग में समायी हुई है. पिछले कुछ वर्षों से मेरा स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता. लेकिन इस पर भी मैं कभी-कभार बच्चों को खेलते हुए देखना चाहता हूं.

१९७३ की बात है. उन दिनों मेरी आंखों का इलाज हो रहा था. इधर डाक्टरों ने आराम करने की सलाह दी थी. उधर आगरा में ध्यानचंद हाकी प्रतियोगिता चल रही थी. डाक्टरों के मना करने के बावजूद मैं फाइनल के दिन आगरा पहुंच गया. लोगों ने मुझे घेर लिया. कहने लगे—'दादा, आपको १० गज से ज्यादा दूर तो दिखायी ही नहीं देता फिर आप मैच का मजा कैसे लेते हैं.' इस पर मैंने कहा था कि हाकी का खेल तो मैं आंख बंद करके भी देख सकता हूं. खिलाड़ियों की हलचल और दर्शकों की तालियों की आवाज से मुझे गेंद के हर मूवमेंट का पता चल जाता है.

आज मुझे अपनी या अपने परिवार की चिंता से ज्यादा भारतीय हाकी की चिंता है. लेकिन चिंता करने से होता ही क्या है. सवाल तो यह है कि जब दुनिया के अन्य देश हाकी के खेल में इतनी तरक्की कर सकते हैं, तो हम क्यों नहीं कर सकते. भारत को तो दुनिया वाले जगतगुरु कहते थे. दूसरों ने हमसे हाकी सीखी और हमसे आगे निकल गये.

आप लोग आगे बढ़ें, देश का नाम ऊंचा करें यही मेरी इच्छा है. आप सबको मेरी शुभकामनाएं.

मेरा पता है–३९६ प्रेम गंज, सिप्री बाजार, झांसी

(प्रस्तुतकर्ता : योगराज थानी)


आप इनमें से किस पुरुष जैसे दिखते हैं?
आप अपने शरीर को शक्तिशाली मांसल बनाइए—
सिर्फ १४ दिन में परिणाम देखिए—
अन्यथा मूल्य न दीजिए!
नये पावरमीटर



भावना और भंवर

यशवंत मेहता

सातवीं कक्षा के विद्यार्थी इकट्ठे हुए हैं. उन्हें एक टीम खड़ी करनी है. किसको टीम में लेना है और किसको?

दो महीनों बाद दीपावली की छुट्टियां होने जा रही हैं. इस अवसर पर खेलकूद की अनेक प्रतियोगिताएं होंगी. कबड्डी, खो-खो, लंबी कूद, ऊंची कूद, गेंद-फेंक, लंगड़ी दौड़, बोरी-दौड़, गिल्ली-डंडा और तालाब में तैराकी भी.

प्रतियोगिताएं हैं, तो इनाम भी हैं. अखबारों में छप चुका है—शहर के नगर पिता स्वयं आयेंगे और विजेताओं को इनाम बांटेंगे. तैराकी में विजेता टीम को तो वह खास अपनी तरफ से भी इनाम देने वाले हैं.

जुदा-जुदा उम्र के तैराकों के लिए जुदा-जुदा विभाग हैं. 'विनय मन्दिर' के नोटिस-बोर्ड पर घोषणा चिपका दी गयी है. प्रत्येक कक्षा से सात-सात जनों की एक-एक टीम ली जानी है. अगले हफ्ते से तैराकी की ट्रेनिंग शुरू हो जायेगी.

सातवीं कक्षा के विद्यार्थी इसी लिए इकट्ठे हुए हैं. मानीटर है गिरीश. एक के बाद एक वह विद्यार्थियों से पूछ रहा है, "रमेश, तुम रहोगे टीम में? भीमसेन? मोहन?"

इन तीनों ने 'हां' कही, लेकिन रश्मिन ने 'ना'. रश्मिन को न तैरना आता है, न सीखने की उसकी इच्छा है. त्रिलोक ने भी इंकार किया. उसको तो किसी भी खेलकूद में दिलचस्पी नहीं. अमन तैयार हो गया. हनुमंत ने भी सहर्ष 'हां' कहा. गिरीश खुद तो टीम में था ही.



यों छह जने हो गये. सिर्फ एक की कसर थी.

"हां, भई, अब कौन?" गिरीश ने पूछा.

जवाब में सुकेतु उठा, "टीम में शामिल होने की मेरी हार्दिक इच्छा है, लेकिन... मुझे तैरना नहीं आता. अगर तुम सिखा सको, तो ..."

गिरीश कहने जा ही रहा था, "हां, हां, क्यों नहीं...." लेकिन हनुमंत ने बीच में ही टोक दिया, "तुम? तैराकी की टीम में? अरे, जरा तो सोचा होता! टीम में तुम्हें लेना ही कौन, लंगड़दीन?"

और हनुमंत जान-बूझ कर लंगड़ाता हुआ, नाटकीय अदाएं दिखाता, इधर-उधर चलने लगा. कक्षा के अधिकांश लड़के हंस पड़े.

सुकेतु बायें पैर से जरा लंगड़ाता था. हनुमंत के ऐसे मजाक से उसका चेहरा बुझ गया. आग्रह के स्वर में उसने धीमे-धीमे कहा, "मैं तैरना जरूर सीख लूंगा. मुझे टीम में ले लो, गिरीश."

हनुमंत मुंह फाड़कर हंसा, "अबे, जा-जा! तैमूरलंग! शीशे में अपनी सूरत देखी है कभी?"

गिरीश कड़क कर बोला, "हनुमंत! भरी कक्षा में अपने ही एक साथी का ऐसा मजाक उड़ाते हो?"

"क्यों नहीं! मैं तो इस लंगड़े बादशाह का मजाक रोज उड़ाता हूं. लंगड़दीन, लंगड़दीन, हजार बार लंगड़दीन!"

सुकेतु ऐसा पानी-पानी हुआ कि खड़े रहना भी मुश्किल हो गया उसके लिए. बेंच पर बैठते हुए उसने कहा, "जाने दो गिरीश! टीम में किसी और को ले लो."

मगर गिरीश बोला, "नहीं, यह नहीं होगा. टीम में तुम्हीं लिये जाओगे."

हनुमंत चिल्लाया, "नहीं लेना है इस को! बोलो गिरीश, तुम क्या करोगे? लड़ोगे मुझसे?"

"देखो हनुमंत, माना कि तुम बहुत ताकतवर हो और मैं तुम्हारे सामने नहीं टिक सकता, लेकिन यहां लड़ाई का कोई सवाल ही नहीं है. सुकेतु जरा लंगड़ा कर चलता है, तो क्या! तैरने में उसे भला क्या दिक्कत आयेगी?"

"चाहे जो हो, मैं कहता हूं कि उसे नहीं लेना है."

"लेकिन क्यों? अभी कल ही मास्टर जी ने हमें क्या पढ़ाया था? क्या बॉडिस



एडीसन आठ साल की उम्र में बहरे नहीं हो गये थे? लेकिन उन्होंने कितने बड़े-बड़े आविष्कार किये! बिजली का लैम्प, ग्रामोफोन, फिल्म. . . जाने क्या-क्या उन्हीं ने पहली बार तैयार किया."

किंतु हनुमंत अड़ गया, तो अड़ गया. दादा टाइप का लड़का था. पुरानी आदत थी उसकी—मैंने जो कह दिया, सो कह दिया.

इधर गिरीश भी यों झुकने वाला नहीं था. आखिर वह कक्षा का मानीटर था. उसने टीम के अन्य सदस्यों की राय ली.

रमेश बोला, "मुझे क्या एतराज?"

नीलकांत ने कहा, "सुकेतु अगर तैरना सीख जाता है, फिर दिक्कत ही क्या है?"

मोहन की राय थी, "सुकेतु में जोश है. अगर हम सिखायेंगे, तो वह जरूर सीखेगा. अभी तो फाइनल में बड़ा वक्त है."

अमन ने भी कहा कि सुकेतु को लिया जाये. फलस्वरूप हनुमंत अकेला पड़ गया. क्रोध से वह हथेलियां मसलने लगा. यह मोहन ने देखा. ताकत की कमी मोहन में भी नहीं थी. बोला, "देख हनुमंत, यह न सोचना कि ताकत के जोर पर गलत बात मनवा लोगे. शांति से बात करो, वरना टीम से निकल जाओ."

"मेरे बिना तुम लोगों की टीम हार जायेगी." हनुमंत का घमंड थमा नहीं रहा था.

"हम खेलने के लिए खेलते हैं, हारने या जीतने के लिए नहीं खेलते."

"ठीक है फिर! मैं अभी से निकल जाता हूं."

"कोई हर्ज नहीं." गिरीश ने कहा.

"लेकिन याद रखना, फाइनल के दिन सबके साथ मैं भी तैरूंगा. टीम में न होने के बावजूद तैरूंगा. तुम लोग अपनी आंखों से देखोगे कि मैं सबसे आगे निकल गया. पछताओगे कि मुझे टीम में क्यों न रखा! हां!"—और हनुमंत दनदनाता हुआ कक्षा से निकल गया.

•

ट्रेनिंग शुरू हुई. सुकेतु ने सचमुच बड़ी तेजी से तैरना सीखा. उसका शरीर भारी नहीं था और हाथ थे लंबे-लंबे. थोड़े ही दिनों में वह बड़ी तेजी से पानी में आगे बढ़ने लगा.

लेकिन हनुमंत दुनिया भर में प्रचार करता फिर रहा था कि उस टीम की किस्मत में तो हार ही बदी है. भला किसी लंगड़े को साथ रखा जाता है?

दिन बीतते गये. दीपावली की छुट्टियां आ पहुंचीं. प्रतियोगिताएं शुरू हुईं.

ग्यारह से पंद्रह बरस के तैराकों की जुदा-जुदा टीमों की प्रतियोगिता सोमवार को थी. हनुमंत सुबह से ही तालाब के किनारे पहुंच गया. अपनी तैरने की पोशाक वह साथ लाया था.



ा अपनी बारी के बाद एक टीमें तैरने लगीं. इस
ी निकल कर उस किनारे जाने में किस टीम
ें बदों न र ...ना समय लगा, नोट किया जाने
मदनाला ...र तैराक का समय अलग-अलग
...ही हो रहा था.
...ी तैराकों के साथ हनुमंत भी
तु ने स... कूद गया. जो उसने कहा था,
. उसका ... साबित कर दिखाना चाहता था.
...से जोर-जोर से हाथ चलाना शुरू
ी तेजी से ...देखते-देखते वह मानों जलों से
...गया.

ा भर में ...ातों की टीम में सबसे आगे
... उस टीम ... था. पैर में नुक्स के बावजूद
बढ़ी है. ... उसे कोई दिक्कत नहीं हो रही
रखा जाता ...र का वजन कम होने के कारण
दीपावली ... आगे बढ़ना उसके लिए आसान
प्रतियोगि...

...मझधार के बीचों-बीच आ पहुंचा.
स के तैराक ... सुकेतु ने देखा कि आगे-
योगिता को ... रहा एक विद्यार्थी हकने-सा
ने ही तालु ... हाथ-पैर फटकार तो रहा है,
अपनी तैरा ... नहीं बढ़ रहा है. शायद डूबने
था. ...ी है. उसका लगभग पूरा मुंह
... गया है.

...हनुमंत था.

...र शरीर और जोश ही जोश
... से ज्यादा तेजी के साथ
... कारण वह बुरी तरह थक



... कर रहे पानी के बीच सुकेतु
... हनुमंत को पहचाना, त्यों ही
... गया. एकबारगी तो उसे
... हुआ कि हनुमंत जैसा चालाक
...की मजबूरी में लगभग डूब
... यदि बचाया न गया, तो
... जायेगा.

हनुमंत को बचाने के लिए सुकेतु ने हाथ बढ़ाया ही था कि अचानक सारे आकाश में जैसे एक ही शब्द गूंजने लगा.

लंगड़दीन! लंगड़दीन!

और सुकेतु ने हाथ पीछे खींच लेना चाहा. 'डूबता है तो डूबे, बला से!' सुकेतु ने सोचना चाहा.

लेकिन उसने जो चाहा, वो हुआ नहीं. अपना हाथ वह पीछे न खींच सका. आगे बढ़कर उसने हनुमंत को थाम ही लिया. उसे बचाने की कोशिश में सुकेतु अपना इनाम खो सकता था. सुकेतु के कारण पूरी टीम की बदनामी होगी. जिधर देखो, वहीं आवाज उठेगी, 'लंगड़े की टीम हार गयी, लंगड़े के ही कारण लंगड़े की टीम . . .'

सुकेतु ने हनुमंत का एक हाथ अपने बायें हाथ से पकड़ लिया. दाहिने हाथ से सुकेतु ने पानी को काटना जारी रखा. छपाक-छपाक! उसके दिमाग में भारी उधेड़बुन मची हुई थी. छपाक! भाग! भाग, लंगड़दीन, भाग! दुश्मन को छोड़ पानी में—और भाग! छपाक!

लेकिन वह हनुमंत के भारी बदन को खींचता हुआ हांक रहा था. . . डूब जायेगा . . . हनुमंत के साथ सुकेतु भी डूब जायेगा . . . नहीं, नहीं . . . सुकेतु नहीं डूबेगा, सुकेतु तैरेगा. कोल्हू सा हनुमंत का वजन . . . दीवानों की तरह सुकेतु एक हाथ और दो पैरों से पानी काटने लगा.

फिर आसपास का कोई होश न रहा उसे. कब वह किनारे पहुंचा, यह भी न जान पाया. पल भर को लगा, जैसे पानी में पड़ा है. अगले पल लगा, गहरी लहरों में जा बैठा है. उसके बायें हाथ से

(शेष पृष्ठ ... पर)

बिना उड़े मैं 'उड़न सिख' बन गया



□ *मिल्खा सिंह*

अगर मैं जंगल में पैदा हुआ होता तो खरगोश के साथ दौड़ता, हिरण के साथ कुलांचे भरता और [illegible] कि मैं उन्हें पछाड़ कर ही दम लेता. ऐसा कुछ भी नहीं है, जो हम करना चाहें और कर न सकें.

मैं चिड़िया नहीं हूं कि उड़ जाऊं लेकिन फिर भी लोग मुझे आज 'उड़न सिख' (फ्लाइंग सिख) कहते हैं.

तो आओ, सबसे पहले मैं आपको यही बता दूं कि मुझे 'फ्लाइंग सिख' का खिताब कब और कहां प्राप्त हुआ. १९६० में मैंने पाकिस्तान का दौरा किया था. मेरी दौड़ देखने के लिए लाहौर के न्यू स्टेडियम का मैदान खचाखच भरा था. मेरा असली मुकाबला अब्दुल खालिद से था. वह पिछले तीन वर्षों से तैयारी कर रहा था. १०० मीटर की दौड़ अब्दुल खालिद ने जीत ली थी. असली मुकाबला २०० मीटर का था. जिस समय दौड़ शुरू हुई, दर्शकों ने 'पाकिस्तान जिंदाबाद' के नारे लगाने शुरू कर दिये. लेकिन मैं १०० मीटर के बाद ही अब्दुल खालिद से आगे निकल गया. इस फासले को मैंने २०.७ सेकंड में पूरा करके एशिया का नया रिकार्ड स्थापित किया. जिस समय मुझे विजेता घोषित किया गया, उस समय माइक पर बैठे लोगों ने मुझ से मैदान का एक चक्कर लगाने को कहा.

जिस समय मैं मैदान का चक्कर लगा रहा था, उस समय माइक पर बार-बार यह घोषणा की जाने लगी कि इस दौड़ में मिल्खा सिंह दौड़ा नहीं, बल्कि उड़ा था और पाकिस्तान के इतिहास में इसका नाम मिल्खा सिंह नहीं बल्कि 'फ्लाइंग सिख' लिखा जायेगा.

बस फिर क्या था. उसके बाद मुझे देश और विदेश में 'फ्लाइंग सिख' के नाम से पुकारा जाने लगा. १९५७, ५८ और ५९; इन तीन सालों में मैंने देश और विदेश में ८२ दौड़ों में हिस्सा लिया था और उनमें से ७९ मुकाबले मैंने जीते थे.

मेरे जीवन की सबसे बड़ी घटना तो रोम ओलिंपिक (१९६०) की ही है. हर भारतवासी यह उम्मीद लगाये बैठा था कि मैं कोई पदक जरूर जीत कर

जाऊंगा. मैंने सचमुच पदक जीतने के लिए एड़ी-चोटी का जोर लगा दिया. लेकिन किस्मत ने साथ नहीं दिया. मेरे और अन्य खिलाड़ी स्पेन्स के बीच सिर्फ एक गज का फासला रह गया था. और बस एक गज के फासले से पिछड़ने के कारण मुझे कांस्य पदक भी नहीं मिल पाया. हां, उस समय मुझसे थोड़ी गलती भी हो गयी. दौड़ते समय मैंने मुड़कर पीछे की ओर देख लिया था, जिससे मेरी स्पीड थोड़ी कम हो गयी.

उस समय ओटिस डेविस ने उस फासले को ४४.९ सेकंड में पूरा करके पहला, कार्ल कॉफमैन ने दूसरा (४४.९ सेकंड) और स्पेन्स ने तीसरा स्थान ४५.५ सेकंड) प्राप्त किया था. मैंने उस ऐतिहासिक दौड़ में चौथा स्थान (४५.६ सेकंड) प्राप्त किया था. मजे की बात यह कि हम चारों ने ही ओलिंपिक रिकार्ड तोड़ा था.

तो देखा आपने कि दौड़ में एक सेकंड से पिछड़ना भी कितना कष्टदायक होता है. वैसे यह मेरे जीवन का सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन था. यही मेरे लिए संतोष की बात है.

●

मेरा जन्म ८ अक्तूबर, १९३५ को लायलपुर (पाकिस्तान) में एक बहुत ही साधारण परिवार में हुआ था. १९४७ में जिस समय देश आजाद हुआ, उस समय मेरी उम्र केवल १२ वर्ष की थी. मैं अपने परिवार के अन्य सदस्यों के साथ दिल्ली आ गया. मेरे [illegible] के अधिकतर लोग सेना में भरती हो [illegible] मेरे बड़े भाई माखन सिंह सेना में हवलदार थे. उन्हीं के पास रहकर मैंने नवीं कक्षा तक शिक्षा प्राप्त की. १९५० में मैं कारों और ट्रकों की मरम्मत करने वाली एक मामूली-सी दुकान पर काम करने लगा. लेकिन वहां पर मेरा मन नहीं लगा. १९५२ में मेरे भाई ने मुझे भी सेना में एक मामूली सिपाही के रूप में भरती करवा दिया.

जिस यूनिट में मैं भरती हुआ, वहां मेरे कुछ साथी बास्केटबाल, हाकी और फुटबाल में हिस्सा लेते थे. मेरी शुरू से ही दौड़ने में रुचि थी. मैंने प्राइमरी क्लास से ही दौड़ना शुरू कर दिया था.

शुरू-शुरू में मैं लंबे फासले की दौड़ों में हिस्सा लेने लगा. एक बार पांच मील की दौड़ में मुझे दूसरा स्थान प्राप्त हुआ. उस दिन से मेरा उत्साह बढ़ गया. उसके बाद मेरे प्रशिक्षकों ने कहा कि मुझे एक ही दौड़ पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए. मैंने ४०० मीटर की दौड़ को चुना.

सही मायनों में मेरा असली नामकरण ११ मार्च, १९५६ को नेशनल स्टेडियम में हुआ. उस समय भारत और पाकिस्तान के खिलाड़ी एक दूसरे के यहां आया-जाया करते थे. १९५६ में पाकिस्तान की एथलेटिक टीम भारत के दौरे पर आयी हुई थी. ४०० मीटर की रिले दौड़ का अंतिम मुकाबला था. प्रधानमंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू उस मुकाबले को देखने आये.

उस समय पाकिस्तान की टीम में एशिया के सर्वश्रेष्ठ एथलीट अब्दुल खालिद भी थे. सभी एथलीट रेखा पर आ गये. भारत की ओर से उस समय के चार सौ मीटर के चैंपियन एलेक्स सिल्वेरिया को दौड़ शुरू करनी थी. पाकिस्तान की ओर से यह भार ख्वाजा मुहम्मद को सौंपा गया था. जब पहली

कैंप समाप्त हुई, तब पाकिस्तान का एथलीट आगे था. लेकिन अब मेरी बारी आयी, तो मैंने सारी कसर पूरी कर दी और उस ओलंपियन से पीछे मुड़कर मैंने पाकिस्तानी खिलाड़ी को यह चुनौती-सी दे डाली कि अगर हिम्मत है तो मुझे पकड़ लो.

खिलाड़ी और खिलाड़ी का रिश्ता कितना मधुर होता है, इसका अंदाजा तो मुझे उस दिन लगा जब १९७१ में भारत-पाक युद्ध के दौरान पाकिस्तानी सैनिक अब्दुल खालिद को युद्धबंदी बना कर भारत लाया गया और उसने आते ही सबसे पहले मेरे बारे में पूछताछ की.

सफलता के इस शिखर पर पहुंचने के लिए मुझे काफी संघर्ष करना पड़ा. सेना की परेड, फिर नियमित व्यायाम, ऊपर से ५-६ घंटों तक जीपों और मोटर-साइकिलों की मरम्मत की ड्यूटी और इस सबके बाद अभ्यास के लिए समय निकालना. वहां न कोई मेरी सहायता करने वाला था, न मार्गदर्शन करने वाला और न पीठ थपथपाने वाला. और तो और, जब मैं दौड़ता था तो कोई मेरा समय नोट नहीं करता था.

लेकिन मैंने इस सबके बावजूद अभ्यास में कोई कसर नहीं छोड़ी.

जहां तक रिकार्डों का सवाल है, काफी समय तक मेरा २०० मीटर की दौड़ में २०.८ सेकंड का और ४०० मीटर की दौड़ में ४६.६ सेकंड का एशियाई रिकार्ड १६ वर्ष तक बरकरार रहा. इस पर मुझे कोई विशेष खुशी नहीं हुई. मेरी तो सदा यही कामना रही कि कोई भारतीय खिलाड़ी मेरे रिकार्डों को तोड़े. मुझे विश्वास था कि मेरा यह सपना



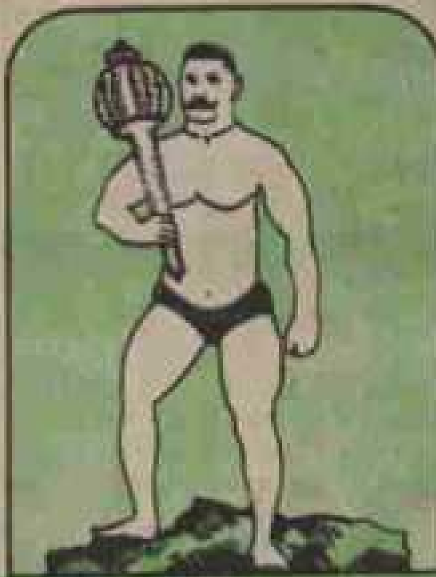


लम्बी दौड़ों के शिव-नाथसिंह (ऊपर) और हरिचंद (दौड़ते हुए) का स्वास्थ्य अनुपम है. 1976 के मांट्रियल ओलंपिक में हरिचंद 10000 मीटर की दौड़ में आठवें स्थान पर रहे. ओलंपिक दौड़ों की हीट में हरिचंद ने 10000 मीटर की दूरी 28 मिनट 48.72 से. में पूरी की थी. वह पहले एशियाई खिलाड़ी हैं जिन्होंने 29 मिनट से कम समय में इस दौड़ को पूरा किया है. शिवनाथ सिंह 5 हजार और 10 हजार मीटर दोनों दौड़ों में भाग लेते हैं.

एक न एक दिन जरूर पूरा होगा. १९७४ में तेहरान में हुए एशियाई खेलों में श्री-लंका के [illegible] ने इस दूरी को ४६.२१ सेकंड में पूरा करके १६ वर्ष बाद मेरा रिकार्ड तोड़ा.

मैं अब तक हजारों खिलाड़ियों को प्रशिक्षण दे चुका हूं. मैं हमेशा उन्हें अपनी ही मिसाल देता हूं और कहता हूं कि पहले कुछ करो तो सही. मुझे ही देखो न. सिर्फ चौथी पास हूं और सिर्फ दौड़ने की बदौलत यहां से यहां पहुंच गया हूं. १९५९ में मुझे पद्मश्री और हेल्म्स पुरस्कार से भी सम्मानित किया गया. आज मुझे किस बात की कमी है. नाम, दौलत, शोहरत सभी कुछ तो है.

(प्रस्तुतकर्ता : योगराज थानी)



रुस्तमे जमां गामा

बलबीर सिंह

गामा पहलवान का नाम सदियों तक अमर रहेगा. सन् १८८२ में उसका जन्म हुआ था. वह अभी चार वर्ष का ही था कि पिता का साया उसके सिर पर से उठ गया था. तब उसे उसके मामा ईदा पहलवान के पास भेज दिया गया.

बड़ा होने पर वह भाई माधोसिंह पहलवान का शागिर्द बन गया. उसका सबसे पहला मुकाबला उस समय के प्रसिद्ध पहलवान रहीम सुल्तानी के साथ हुआ, जिसमें दोनों बराबर रहे.

सन् १९१० में 'जान बुल वर्ल्ड रेस्लिंग चैंपियनशिप' के संचालकों ने संसार-भर के पहलवानों को बुलाया. भारत की ओर से गामा, इमाम बख्श और अहमद बख्श चुने गये. जब वे पहलवान लंदन पहुंचे, तो उन्हें बड़ी निराशा हुई. उक्त संस्था के संचालकों ने कहा कि वे भारतीय पहलवानों के नाम उस मुकाबले में लड़ने वालों की सूची में नहीं रख सकते, क्योंकि वे सब कद में बहुत छोटे हैं और उनका वजन भी आवश्यकता से कम है. उस समय गामा का वजन २५० पौंड के लगभग था, और उसके भाई इमामबख्श का १८२ पौंड. साढ़े पांच फुट के कद वाले गामा को पहलवान ही न माना गया.

जब गामा को किसी तरह भी न चुना गया, तो उसके दिल पर बड़ी सख्त चोट लगी. उसे अपनी शक्ति और कला पर पूर्ण विश्वास था. आखिर उसने खुलेआम दो घोषणाएं कीं : "जो भी पहलवान अखाड़े में मेरे सामने पांच मिनट तक खड़ा रह सकेगा और गिरेगा नहीं, उसे मैं पांच पौंड इनाम के तौर पर दूंगा."

दूसरी घोषणा थी : "मैं इंग्लैंड के किन्हीं बीस पहलवानों को एक-एक करके सिर्फ एक घंटे में चित कर सकता हूं. जो भी चाहे मुझसे लड़कर आजमा ले."

गामा की दूसरी चुनौती तो किसी ने स्वीकार नहीं की, पर पहली चुनौती के उत्तर में पहले ही दिन तीन पहलवान मुकाबले के लिए तैयार हो गये. गामा ने किसी को भी चित करने में दो-तीन मिनट से ज्यादा नहीं लगाये.

यह देखकर दूसरे दिन बारह पहलवान मुकाबले के लिए तैयार हो गये. पर वे भी गामा के सामने टिक न सके. गामा की

ऐसी असाधारण जीत देखकर टूर्नामेंट कमेटी को उसका नाम लड़ने वालों की सूची में दर्ज करना पड़ा.

कुश्तियां शुरू हुईं. गामा का मुकाबला पहले ही दिन जबिस्को के साथ रखा गया. पूरे तीन घंटे वह कुश्ती होती रही, पर हार-जीत का फैसला न हो सका. यद्यपि जबिस्को अपनी पूरी तैयारी में था, फिर भी वह कुश्ती लड़ते हुए सारा समय अपने बचाव की ही कोशिश करता रहा. साफ दिखायी दे रहा था कि गामा जबिस्को से बढ़िया पहलवान है. जबिस्को तो उसके नीचे पड़े रहने में ही संतुष्ट था. आखिर दर्शक उस कुश्ती का मजाक उड़ाने लगे. गामा जबिस्को की पीठ पर सवार था और उसे थपेड़े मार-मार कर उठने के लिए ललकार रहा था. कभी-कभी तो वह उसके इर्द-गिर्द चक्कर लगाता, ताकि जबिस्को उठकर खड़ा हो जाये.

आखिर हार-जीत का फैसला न होते देखकर टूर्नामेंट कमेटी ने वह कुश्ती अगले दिन के लिए स्थगित कर दी. पर अगले दिन जबिस्को अखाड़े में ही न आया. कमेटी को विश्व विजेता की पेटी गामा को देनी पड़ी. वह पेटी गामा के घराने के पास आज भी है. गामा को 'रुस्तमे जमां' का खिताब मिला. वह सारे यूरोप में भारत का सिक्का जमाकर घर लौटा.

जब वह इंग्लैंड से भारत पहुंचा, तो आते ही उसका पहला प्रतिद्वंद्वी रहीम पहलवान मुकाबले के लिए फिर तैयार हो उठा. दोनों की यह आखिरी टक्कर इलाहाबाद में हुई. एक बहुत बड़ा अखाड़ा तैयार किया गया. रहीम पहलवान अपने शरीर पर सिंदूर मलकर मस्त हाथी की तरह चलता हुआ अखाड़े में आया.

दोनों पहलवानों ने हाथ मिलाया. कुश्ती शुरू हुई. गामा ने रहीम पर कई भयंकर दांव लगाये, पर रहीम सब दांवों को तोड़ता गया. एक बार जब रहीम ने अखाड़े में से भागने का प्रयत्न किया, तो गामा ने भागकर उसे जा दबोचा और कमर से पकड़कर ऊपर उठा लिया. दर्शक भौंचक्के रह गये. तभी जब गामा ने उसे नीचे पटकने का प्रयत्न किया, तो रहीम की टांगें कैंची की तरह मुड़ीं और एकाएक गामा के सामने आ खड़ा हुआ. दर्शकों ने तालियां बजायीं. उसी समय गामा ने पूरी शक्ति लगाकर उसे दोहत्थड़ मारा, तो वह खड़ा न रह सका और कराहता हुआ अखाड़े के बाहर आ गया. इस प्रकार उससे वह कुश्ती पूरी नहीं लड़ी गयी. विजयी गामा को गुर्ज और 'रुस्तमे हिंद' का खिताब दिया गया.

सन् १९२८ में जबिस्को ने गामा से फिर लड़ने की इच्छा प्रकट की, ताकि अपनी हार का बदला ले सके. उन दिनों गामा महाराजा पटियाला का दरबारी पहलवान था. महाराजा ने उसे सात मुरब्बे जमीन दी हुई थी और उसके नाम उम्र भर के लिए २५० रुपये महीना पेंशन लगायी हुई थी. गामा हर तरह से निश्चिंत था. जबिस्को की चुनौती पर महाराजा पटियाला ने उसे लिख भेजा कि उसे अगर गामा से लड़ना है, तो भारत में आकर लड़े.

जबिस्को पटियाला पहुंचा. उन दोनों पहलवानों को अपनी ही नहीं, अपने-अपने देश की इज्जत का भी खयाल था.

कुश्ती शुरू होने पर दोनों पहलवानों ने अभी हाथ मिलाया ही था कि गामा

चीते की तरह जबिस्को पर लपका और कुछ ही क्षणों में उसे चित कर दिया. जब जबिस्को से उस कुश्ती के बारे में पूछा गया तो वह अनायास ही कह उठा, "गामा बिजली की तरह है." कुश्ती में गिरते समय भी उसके मुंह से निकला था, "गामा, तुम सचमुच शेर हो!"

ऐसा बली था वह! जैसी उसमें ताकत थी, वैसी ही उसकी खुराक भी थी. गामा की रोज की खुराक में २५ सेर दूध, ३ पाव घी, दो पाव मक्खन, दो सेर बादाम और ६ सेर फल होते थे. वह पांच-पांच हजार दंड-बैठकें निकालता था. ढाई मन के चार व्यक्तियों को उठाकर कुछ कदम चलता था. जिस कुदाल से वह अखाड़ा खोदता था, उसका वजन १२ सेर था. उसकी छाती ५६ इंच थी और भुजाएं २१ इंच.

सन् १९१२ में गामा ने नवाब बेगम से शादी की. कुछ साल बाद जब वह मर गयी, तो गामा ने उसकी छोटी बहन नजीर बेगम से शादी की. दूसरी पत्नी की कोख से नौ बच्चे हुए, जिनमें पांच लड़के थे, पर वे जीवित न रहे.

पांच पुत्रों की मौत ने गामा की जैसे कमर तोड़ दी. उसके मन में घोर निराशा छा गयी. वह लाहौर का अपना मकान छोड़ कर रावी के किनारे रहने लगा.

गामा रात के तीन बजे उठ जाता था. सन् १९५३ में एक रात जब वह उठा, तो एक सांप ने उसे डंस लिया. पर वह बच गया. फिर वह जल्दी ही दमे और दिल की पीड़ाओं का शिकार हो गया. आखिरी दिनों में उसकी यह हालत थी कि वह अपने चेहरे पर बैठी मक्खी भी नहीं उड़ा सकता था. उन दिनों उसके

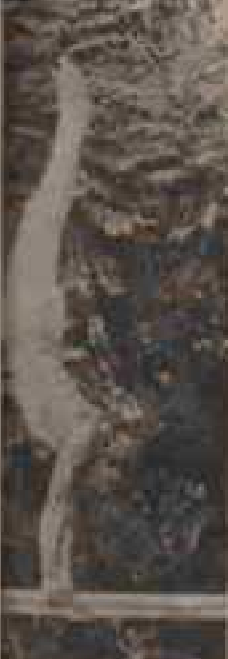


विश्व प्रसिद्ध भारतीय तैराक मिहिर सेन अपनी पत्नी, बच्चों के साथ. लंबी तैराकी में मिहिर सेन का कोई मुकाबला नहीं. १९५८ में इंग्लिश चैनल पार करने के बाद मिहिर सेन ने २२ मील लंबे खतरनाक पाक जल डमरू मध्य (भारत और श्रीलंका के बीच का समुद्र) को लगातार तैरकर पार किया था. यह समुद्र भयानक शार्क मछलियों और जहरीले सांपों से भरा है.

पास इलाज कराने के लिए रुपये भी नहीं बचे थे. आखिर उसे अपने कई मेडल और छह गुर्ज बेचने पड़े थे.

तब समाचार-पत्रों ने आवाज उठायी. बिड़ला ने गामा को पांच हजार रुपये भेजे और दो साल के लिए प्रति मास सौ रुपये भेजने का वायदा किया. तब लाहौर और कराची की म्युनिसपेलिटियों ने भी उसे एक-एक हजार रुपये दिये. उसे सरकारी खर्च पर अस्पताल में दाखिल करवाया. पर उसकी हालत दिन-प्रतिदिन खराब होती गयी. आखिर २३ मई १९६० को गामा की मृत्यु हो गयी.


ऐसे लगते हैं मेरे पिताजी...
जब वह मेरा रिपोर्ट कार्ड देख रहे होते हैं...
जब वह प्रसन्न होते हैं...
जब मैं खिड़की का शीशा तोड़ देता हूँ...
जब मैं चेहरे पर डरावना मुखौटा चढ़ाकर उन्हें डरा देता हूँ...
क्या मज़ा आता है! तुम भी कैमल वाटर कलर से अपने पिताजी के—और अपनी मनपसंद किसी भी चीज़ के चित्र बनाने की कोशिश करो।
कैमल
वाटर कलर्स और पोस्टर कलर्स
कैम्लिन प्राइवेट लिमिटेड
आर्ट मटीरियल डिवीजन
जे. बी. नगर
बम्बई ४०० ०५९.





अनोखा तीरंदाज



कल्पना देवनाथ
जिन्हें लुधियाना (पंजाब) में हुई [illegible] अखिल भारतीय राष्ट्रीय महिला चैंपियन में राष्ट्रीय जिमनास्ट की उपाधि प्राप्त हुई.

११ जुलाई १९७७. दिल्ली की निगम रंगशाला के मंच पर एक युवक हाथ में डंडा पकड़े खड़ा था. डंडे के दूसरे सिरे पर धागे से बंधा लट्टू चाक की तरह घूम रहा था. करीब चार मीटर दूर अर्जुन की सी वेशभूषा में सजा युवक धनुष पर तीर चढ़ाये खड़ा था. उस युवा धनुर्धारी के धनुष से तीर छूटा, धागा कटा और लट्टू धनुर्धारी के हाथ में आ गया. फिर उस धनुर्धारी ने पीठ के बल लेटकर घुटनों के बीच फंसे शीशे में देखकर घूमते लट्टू का धागा काट दिखाया. इस तरह उसने धनुर्विद्या के सात-आठ प्रदर्शन किये और खास बात यह कि वह कोई निशाना चूका नहीं.

वह युवक है सुभाष चंद्र राजपूत. वह केवल धनुष-बाण चलाने में ही कुशल नहीं है, बल्कि अच्छा जिमनास्ट और जूडो के दांव-पेचों में भी माहिर है. ऊपर के दो चित्रों में तुम उनके जिमनास्टिक के करतब देख रहे हो. ✿

अशोक शुक्ल
अशोक एक मेधावी छात्र और प्रतिभाशाली खिलाड़ी हैं. पिछले वर्ष वह दिल्ली विश्वविद्यालय की जिमनास्टिक टीम के कप्तान थे. अब तक कई पुरस्कार जीत चुके हैं. जिमनास्टिक में अच्छे प्रदर्शन के लिए नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ स्पोर्ट्स पटियाला से छात्रवृत्ति मिल रही है. वह सेंट स्टीफेंस कालेज, दिल्ली में अर्थशास्त्र आनर्स (द्वि. वर्ष) के छात्र हैं.




स्कूल के लिए बेजोड़
Bata

पिटारा

बुखार से तप रहे प्रसिद्ध खिलाड़ी का बुखार देखकर डाक्टर ने कहा, "बाप रे बाप! एक सौ आठ डिग्री!"

अर्द्धमूर्छित खिलाड़ी ने सुना और बड़बड़ाया, "वैरी गुड, मेरा एक और नया रिकार्ड!"

एक डाक्टर क्रिकेट का तेज गेंदबाज भी था. एक मैच के बाद उसके मित्र ने पूछा,

"कहो आज के मैच में कैसी सफलता मिली?"

"बहुत अच्छी! आज मुझे अपनी गेंदों पर पांच विकेट और चार मरीज मिले." डाक्टर ने बताया.

नरक से स्वर्ग वालों के पास फुटबाल मैच खेलने की चुनौती आयी. चुनौती पढ़ने के बाद देवताओं को चिंतित देख देवदूत ने पूछा, "आप चिंतित क्यों हैं? संसार के सर्वश्रेष्ठ खिलाड़ी तो स्वर्ग में ही हैं."

"खिलाड़ी तो यहां हैं, लेकिन सारे के सारे 'रेफरी' तो नरक में हैं." एक देवता ने चिंता का कारण बताया

बाक्सिंग प्रतियोगिता हो रही थी. राम जी को प्रतिद्वंद्वी ने ऐसा घूंसा मारा कि वे धरती चूम गये.

रेफरी ने गिनना आरंभ किया, "एक ...दो ...तीन ..." तभी राम जी के मैनेजर ने किनारे पड़े राम जी से कहा, "जब तक नौ न हो जाये मत उठना."

"अभी क्या बजा है?" राम जी ने बड़ी मुश्किल से आंखें खोलीं और पूछा.

□ आलोक मेहरोत्रा

माया पच्ची

नीचे के चित्र में जो चेहरे दिये गये हैं, वो बहुत-कुछ एक-दूसरे से मिलते हुए हैं. लेकिन इनमें केवल दो ही चेहरे ऐसे हैं जो बिल्कुल एक जैसे हैं. चित्र पर नजर दौड़ा कर बताओ तो कि वे दो चेहरे कौन-से हैं. 30 सेकेंड में न बता सको तो 'पराग' उलट कर उत्तर देख लो.

□ वासुदेव 'सिंधु-भारती'



कहते हैं कीकर सिंह पंजाब के रहने वाले थे और उनका बचपन का नाम कुछ और था. जाति के वे जाट थे और जंगलों में भेड़-बकरियां चराया करते थे.

एक बार उनके गांव के पास एक दंगल हुआ. उस दंगल को देखने का उन्हें भी मौका मिला. एक पहलवान अखाड़े में लोगों को ललकार रहा था कि 'है कोई माई का लाल जो मुझसे दो-दो हाथ करे.' कीकर सिंह ने उसकी ललकार सुनी और मैदान में कूद पड़े. देखते ही देखते उस बलिष्ठ पहलवान को उठा-उठाकर ऐसा पटका कि वह भी बोल गया.

कुश्ती में इस विजय के बाद कीकर सिंह को पहलवान बनने का शौक हुआ और वे रोज पहलवानी करने लगे. गुरु भी ऐसा मिला, जो कसरत ही कसरत करवाता. सुबह चार बजे कीकर को उठाकर खड़ा कर देता, पहले अखाड़ा खुदवाता, फिर दौड़ लगवाता और फिर दो मील दूर से अपने लिए दातौन मंगवाता.

एक दिन जब गुरु के लिए दातौन लेने गये, तो जनाब नीम के पेड़ से ही जोर से आजमाइश कर बैठे. कहते हैं उन्होंने कंधे से नीम के विशाल तने को एक धक्का दिया और नीम की जड़ें चरमरा गयीं.



कलियुगी भीम कीकर सिंह

□ प्रमोदशंकर भट्ट

फिर एक और धक्का. तीसरा धक्का लगना था कि नीम जमीन पर. फिर क्या था, पहलवान ने पूरे पेड़ को कंधे पर उठाया और दौड़ते हुए गुरु के आश्रम में आये. पेड़ गुरु के आगे रखते हुए बोले, "गुरु जी, जी भर कर दातौन करो. जब खत्म हो जाये तो आगे हुक्म करना."

कीकर सिंह का वजन नौ मन तथा साढ़े आठ-नौ फीट का कद बताया जाता है. ५२ इंच चौड़ी छाती थी. दो सेर बादाम, घी तथा एक बकरा रोज की उनकी खुराक थी.

एक बार का जिक्र है, कीकर सिंह गांव से एक पीपा देसी घी लेकर आ रहे थे. रास्ते में चुंगी वाले ने मीनमेख निकाली. आव देखा न ताव, कीकर सिंह ने पीपे का ढक्कन खोलकर पीपा भर घी पी लिया और लंगोट लगाकर वहीं डंड-बैठक लगाने लगे. जब तक शरीर से पसीना चूने नहीं लगा और उन्हें विश्वास न हो गया कि अब शरीर में घी का कोई असर नहीं रहा, तब तक वे वर्जिश करते रहे. चुंगी अधिकारी यह देखकर दंग रह गया.

हर रोज पांच-छह हजार डंड-बैठक लगाना, दोनों हाथों से पानी भरी चरस खींचकर खेतों को पानी देना, पूरे अखाड़े को गोड़ना, कोल्हू चलाकर चूना और पत्थर पीसना, लोहे के मुगदर घुमाना, तीन-चार मील दौड़ना उनका नित्य का व्यायाम था.

कीकर सिंह की कुश्तियों में रुस्तमे-जहां गुलाम रसूल के साथ हुई कुश्तियां काफी मशहूर हैं. यद्यपि हर कुश्ती में गुलाम रसूल ने ही मात खायी. वह बेहोश हुआ. लेकिन बार-बार वही कीकर सिंह से लड़ने की हिम्मत कर जाता था.

कीकर सिंह एक ही झटके में भारी से भारी पहलवान को हवा में उछाल कर ऊपर उठा लेते थे और जिस कोने में चाहते, पटक कर छाती पर चढ़ बैठते थे.

इस महान पहलवान के शारीरिक बल का अंदाज एक और घटना से भी लगाया जा सकता है.

उस समय के एक राजा कुश्ती के बड़े प्रेमी थे. उनके एक रिसालेदार के शरीर में विशेष प्रकार का दर्द हुआ करता था. उस दर्द की दवा थी एक मशीन, जो सिर्फ बिजली से चला करती थी. उस मशीन में दो नालियां थीं, जिनको छूना किसी के बस की बात न थी. राजा साहब ने कई पहलवानों को उन नालियों को छूने की चुनौती दी. कई पहलवानों ने इनाम पाने की लालसा से उन्हें छूने की कोशिश की, लेकिन झटका खाकर कई गज दूर जा गिरे. कीकर सिंह ने भी वह चुनौती मानी. उन्होंने नालियों को इतनी जोर से पकड़ा कि पसीने से तरबतर हो गये और आंखें लाल हो गयीं. कीकर सिंह की ताकत देखकर राजा साहब भी आश्चर्य चकित रह गये.

बीस मन वजन का पत्थर उठाना, हथेली में गेहूं रखकर पीस देना कीकर सिंह के बायें हाथ का खेल था. गरीबी में जन्मे इस पहलवान ने कुश्तियों और दंगलों में लाखों रुपया और हजारों एकड़ जमीन इनाम में पायी. हजारों कुश्तियां लड़ने पर भी यह पहलवान अजेय ही रहा.

और शायद इसीलिए उन्हें 'कलियुगी भीम' भी कहा जाता था.

बी १/४ गवर्नमेंट हाउसिंग कालोनी,
रमाबाई, घाटकोपर, मुंबई-४०००८४

अण्टे

प्रभाकर [illegible]

"हां, ले, अच्छा!"
और मदन ने निशाना साधकर अण्टा फेंक दिया.

गुच्ची की बगल में होता हुआ अण्टा आगे निकल गया. सुमन के अण्टे को मदन मार नहीं सका था, न उसका अण्टा गुच्चों में ही जा सका. मदन फिर झुंझलाने लगा. एक के बाद एक, लगातार, पांच दावों में हार गया था मदन. और होकर उसने सुमन से कहा, "बस यार, अब नहीं खेलना."

"क्यों?" सुमन ने पूछा, "सारे अण्टे खत्म?"

"मेरे तो खत्म हुए ही; तुम से जो उधार लिये थे, उन्हें भी हार चुका हूं!"

"हार-जीत तो लगी ही रहती है, इसमें क्या है! ले, ये पांच अण्टे और रुपया पूरा हो गया."

"रुपया?"

"अभी ये पांच मिलाकर मैंने तुम्हें पूरे पंद्रह अण्टे दे दिये. बाजार में तो रुपए के बारह ही मिलेंगे."

"अच्छा..." बुदबुदा कर मदन ने सुमन के पांच अण्टों से फिर खेलना शुरू किया. लेकिन न जाने क्यों किस्मत आज साथ नहीं दे रही थी. मदन के हाथों में थरथराहट थी. बार-बार वह निशाना चूक रहा था. उन पांच अण्टों को भी वह एक-एक कर हार गया.

मदन का चेहरा जरा सा रह गया. नजरें झुका कर वह अपने घर की तरफ लौटने लगा. सुमन भी साथ चला.



"मदन, मेरा रुपया कब लौटाओगे?"

"रुपया?"

"हां, एक रुपया."

"भैया, दस-पंद्रह दिन तो लग ही जायेंगे." मदन ने कहा.

"ठीक. लेकिन अगर पंद्रह दिनों में भी न दिया तो?"

"जरूर दे दूंगा." और मदन ने अपने घर की सड़क पकड़ ली. रास्ते भर वह इसी एक उलझन में फंसा रहा, 'सुमन का रुपया मैं कैसे वापस करूंगा.'

घर में कदम रखते ही मां ने उसका उदास चेहरा देखकर पूछा, "क्यों रे क्या हुआ? तेरी तबीयत तो ठीक है?"

"हां ऽऽ" और वह पुस्तक लेकर पढ़ने बैठ गया.

मदन अपने माता-पिता का इकलौता लड़का था. इकलौता था, तो लाडला भी था. हालांकि उसके पिता की आर्थिक स्थिति ऐसी नहीं थी कि उसकी हर इच्छा पूरी कर सकें.

मदन के माता-पिता घर के खर्चों को ही मुश्किल से चला पाते थे. उन दिनों मदन नवीं कक्षा में था. कई बार उसकी फीस के इंतजाम में भी रोड़े अटक जाते. दूसरे लड़कों की तरह मदन को भी कोई रोजाना का जेब खर्च नहीं मिलता था. यदि मिलता होता, तो उसी में से बचत करके वह पंद्रह दिनों में सुमन को उसका एक रुपया आसानी से लौटा देता.

'तो' अब क्या किया जाये? सोचते-सोचते मदन को नींद आ गयी.

●

इतना फैसला तो मदन ने मन-ही-मन कर ही लिया था कि वह आइंदा कभी शर्तों का जुआ नहीं खेलेगा. सुमन कई



बार उसे बुलाने आया कि चलो, खेलें. लेकिन वह अपने फैसले से हिला नहीं.

पंद्रह दिन चुटकियों में बीत गये. सुमन आ धमका, "लाओ, मदन! दो मेरा रुपया. मियाद आज पूरी हुई. अब मुझे रुपये की जरूरत भी है."

"भैया, एक दिन रुक जाओ न? कल जरूर दे दूंगा." मदन को यही सूझा.

"अच्छा, लेकिन अगर कल भी न दिया, तो मैं तुम्हारे पिता जी को बता दूंगा." सुमन धमकी देकर चला गया.

शाम को स्कूल से लौटने के बाद मदन खेलने के लिए बाहर न निकला. एक पुस्तक उठाकर कोने में चुपचाप बैठ गया. कुछ देर बाद उसकी मां ने कहा, "चल, मदन, खाना खा ले."

"नहीं मां, पेट में आज दर्द-सा है. खाना खाने का बिलकुल मन नहीं है." मदन ने बहाना बनाना चाहा. लेकिन एक मां अपने बेटे को भला कैसे भूखा रहने दे सकती है? उसने मदन को थोड़ा-बहुत तो खाने पर मजबूर कर ही दिया.

मदन को बिलकुल चैन नहीं था. 'कल

अगर मैंने रुपया न लौटाया तो सुमन पिता जी को सब बता देगा.' यही विचार उसे बार-बार हलकान कर रहा था. 'कहां से लाऊं, किस से मांगूं? मां से मांगकर देखूं क्या? मां के पास होगा भी या नहीं. अगर होगा भी, तो पूरा एक रुपया वह मुझे क्यों देने चली? पांचेक पैसे दे देगी, हद-से-हद दस पैसे.'

●

रात का वक्त.

पिता जी आंगन में बैठे अखबार पढ़ रहे थे. मां रसोईघर में सब्जी काट रही थी. पिता से डरा मदन भीतर कमरे में अकेला बैठा था. अचानक उसकी नजर खूंटी से लटक रहे पिता जी के कोट पर पड़ी. मदन के दिमाग में कौंध-सी हुई. वह उठा और धीमे कदमों से खूंटी की ओर बढ़ने लगा. उसने कोट की जेब में हाथ डाला. जब हाथ निकाला, तो उसकी उंगलियों में पिता जी का पर्स था.

मदन की आंखें चमक उठीं. पर्स खोल कर देखा, तो उसमें एक रुपए का मुड़ा हुआ नोट था. रुपया निकालकर मदन ने पर्स जेब में वापस डाल दिया.

अगले दिन उसने सुबह-सुबह ही सुमन को उसका रुपया लौटा दिया, लेकिन रुपया लौटाने से मदन के दिमाग का बोझ घटने की बजाय और बढ़ गया था. मदन ने यह क्या कर डाला? जीवन में उसके लिए यह पहला अवसर था, जब उसने घर की किसी चीज पर हाथ डाला था. बार-बार उसके मन में यही विचार उठने लगा कि अगर मैंने अण्टों का जुआ खेलने की आदत न डाली होती, तो कितना अच्छा होता? सुमन जैसे लड़के के साथ दोस्ती ही न बढ़ाई होती, तो?

उसी रात जब वह घर में मौजूद था, उसने अपने माता-पिता को बातचीत करते सुना—

"तुमने मेरी जेब से कोई रुपया तो नहीं निकाला है?" पिता जी ने पूछा और मां ने कहा, "नहीं तो, क्यों?"

"लगता है, नोट कहीं गिर गया!" पिता जी गमगीन स्वर में कह रहे थे, "सब्जी वगैरह के खर्चों में कटौती करके मैंने वह रुपया बचाया था. सोचा था कि मदन के पेन का निब बदलवा दूंगा. कई दिनों से कह रहा है कि निब मोटा चल रहा है. खैर!" और वे चुप हो गये.

निब! नया निब!

मदन को उसकी कितनी सख्त जरूरत थी.

पिता जी के शब्दों ने मदन को चौंका दिया. यदि उसने वह रुपया चुराया न होता, तो? मदन के अफसोस की सीमा न रही. उसने देखा कि उस दिन पिता जी ने खाना भी नहीं खाया था.

●

सारी रात मदन सो न सका. उसने महसूस किया कि अगर सच्चाई पिता जी के सामने उघाड़ कर न रख दी, तो दिल का भार कभी कम न होगा. वह भार मदन को कुचले दे रहा था.

सुबह पिता जी जब अखबार पढ़ रहे थे, मदन होले से उनके पास पहुंचा. पिता जी की नजर उस पर पड़ी, "कहो, बेटे!"

मदन के चेहरे का नूर उड़ गया था. उसके होंठ थरथरा रहे थे, किन्तु आवाज फूटती नहीं थी. उसकी ऐसी दशा देखकर

दो कविताएं

कोई हमें बताये

कोई हमें बताये
वे दिन कब आयेंगे
जब हम घर पर बैठ मजे से
दूध-मलाई खायेंगे;
मम्मी-डैडी से छुप-छुपकर
जम कर मौज उड़ायेंगे!
और हमारी जगह
किताबें और तिल्लियां
पढ़ने को आयेंगे!

□ रामनिवास शर्मा 'मयंक'

अमलतास बो लें

इधर-उधर घूमें,
इससे तो अच्छा हम कागज की नाव
ही बनायें.
जूतों पर पालिश कर लें,
कपड़े धो लें,
घर के इस आंगन में अमलतास बो लें.
ऐसे ही बैठें, इससे तो अच्छा हम माटी
का गांव ही बनायें.
कोने की किताबों पर कोई
सुंदर-सा कवर चढ़ायें.
कमरे की खिड़की में आओ,
कोई गुलदान सजायें.
बिना बात होलें,
इससे तो अच्छा हम, दादी के पांव ही
ही दबायें.

□ कृष्ण कल्पित

पिता जी को आश्चर्य हुआ, "कुछ कहना चाहते हो?"

आखिर पूरा साहस बटोर करके मदन बोला, "पिता जी, आपकी जेब से एक रुपए का नोट मैंने निकाला था."

"तुमने!" पिता जी ऐसे चौंके, जैसे साक्षात आसमान से गिरे हों.

"हां पिता जी, मैंने."

"मुझसे कहते, तो क्या मैं न दिया होता? तुम्हें रुपये से निकालने की क्या जरूरत थी?"

मदन क्या कहता? चुपचाप नजर झुकाये रहा.

"लेकिन तुम्हें ऐसी क्या मजबूरी थी, जो रुपए के बिना काम नहीं चल सकता था?" पिता जी ने पूछा और मदन ने सब कुछ सच-सच बता दिया. इससे पिता जी की गंभीरता और बढ़ गयी. "अच्छा! यानी तुम जुआ खेलते हो और अब चोरी करना भी सीख गये?"

मदन ने गिड़गिड़ाकर कहा, "मुझसे भूल हुई है. जो सजा चाहें, दीजिए. मैंने प्रतिज्ञा कर ली है, आइंदा कभी जुआ नहीं खेलूंगा."

"ठीक है. जाओ. आगे से ऐसा न करना." पिता जी ने मदन से सिर्फ इतना ही कहा, हालांकि मन-ही-मन उनकी तिलमिलाहट की सीमा नहीं थी.

रात को मदन ने अपने माता-पिता को

(शेष पृष्ठ ७२ पर)


छोटू और लंबू
और शुरू हुई—


अरे वाह! अब तो बोदू तीर की तरह आगे बढ़ रहा है!
कमाल है! बोदू ... से भी आगे निकल गया!
हुर्रा! बोदू ने रेस जीत ली!
बोदू महाराज, जिंदाबाद!
घर पर...
हा..हा हा!



एक पुरानी गेंद

□ राजेश्वर

गांव के उस छोटे से मकान के पास ही कुछ युवक टेनिस खेलने आते थे. वे खेलते, गेंद कोर्ट (टेनिस का मैदान) से बाहर जा गिरती. एक पांच साल की लड़की बड़े चाव से दौड़-दौड़कर गेंद उठाती. खेल चलता रहता.

एक दिन खेल के बाद खिलाड़ियों ने एक पुरानी गेंद उस लड़की को दे दी. वह बहुत खुश हुई, दौड़ती हुई घर पहुंची.

अब गेंद तो मिल गयी, लेकिन रैकेट नहीं था. सो उसने डंडे से ही उस गेंद की धुनाई शुरू कर दी. वह उसी तरह से गेंद उछालती, जैसे उसने खिलाड़ियों को उछालते-मारते देखा था. वह भी उन्हीं की तरह सर्विस करने और हिट मारने की कोशिश करती.

बच्ची के चाव को देखकर एक दिन उसकी चाची ने उसे एक रैकेट दिला दिया. अब गेंद भी मिल गयी और रैकेट भी. मगर अब भी उसके साथ खेलने वाला कोई नहीं था. सो वह एक ओर से सर्विस करके गेंद को सामने की दीवार में मारती. और लौटती हुई गेंद पर बैकहैंड स्ट्रोक लगाने की कोशिश करती. धीरे-धीरे उसका बैकहैंड स्ट्रोक का अभ्यास इतना ज्यादा हो गया कि आज भी इस स्ट्रोक को लगाने में उसका कोई मुकाबला नहीं.

वह लड़की आज की मशहूर टेनिस खिलाड़िन इवान गूलागांग है. उसका जन्म १९५१ में आस्ट्रेलिया के न्यू साउथ वेल्स प्रांत के एक गांव में हुआ था. पिता भेड़ें पालने का व्यवसाय करते थे. आठ भाई-बहनों में वह तीसरे नंबर पर थी. बचपन से ही वह लड़कियों की तरह घर में बैठकर खेलना पसंद नहीं करती थी. उसे लड़कों की तरह दौड़ना, कूदना तथा घर से बाहर के अन्य खेलों में हिस्सा लेना ज्यादा पसंद था.

लान टेनिस में इवान की इतनी रुचि देखकर एक टेनिस क्लब के प्रेसिडेंट ने उसकी सहायता की. उसे खेल के नियम, ढंग आदि बताये. जब वह दस वर्ष की थी, तो उन्होंने उससे एक प्रतियोगिता में शामिल होने के लिए कहा. लेकिन जब वह खेलने पहुंची, तो पता चला कि प्रतियोगिता तो सिर्फ बड़ों के लिए थी. खैर, किसी तरह उसे प्रतियोगिता में शामिल कर लिया गया. और उस साल की इवान ने बड़ी शान से महिलाओं की एकल प्रतियोगिता जीत ली. अपने से दुगुनी उम्र की खिलाड़िनों को भी पराजित कर दिया. यह इवान की पहली जीत थी.

इवान की प्रतिभा को देखकर आस्ट्रेलिया के प्रसिद्ध टेनिस प्रशिक्षक विक एडवर्ड्स ने उसे छुट्टियों में टेनिस सिखाने के लिए सिडनी बुलाया. सिडनी शहर इवान के बेरेलान कस्बे से ६०० कि. मी. दूर था. इवान के पिता के पास इतना धन नहीं था कि वह उसके आने-जाने का खर्च दे पाते. लेकिन कस्बे के लोगों के लिए यह गर्व की बात थी कि यह छोटी लड़की उनके छोटे-से कस्बे का नाम रोशन करने जा रही थी. उन्होंने चंदा करके धन जुटाया. इवान के लिए उपयुक्त वस्त्रों का इंतजाम किया.

इसके बाद इवान ने एडवर्ड्स की देख-रेख में टेनिस का जमकर अभ्यास किया. साथ ही पढ़ाई भी जारी रखी.

१९७० में इवान टेनिस की पेशेवर खिलाड़ी के रूप में सामने आयी. उसने पहले साल ही २२ में से आठ प्रतियोगिताएं जीतीं. पेशेवर टेनिस के क्षेत्र में पहले साल ही इतनी प्रतियोगिताएं जीतना बहुत बड़ी बात मानी जाती है.



इवान अपने पति के साथ

इवान की इच्छा थी कि वह मार्गरेट कोर्ट जैसी सफल खिलाड़िन बने. वह मार्गरेट को लान टेनिस की सबसे अच्छी खिलाड़िन मानती थी. संयोग की बात, १९७२ में विंबल्डन के फाइनल में इवान का मुकाबला मार्गरेट से हो गया. हालांकि सेमी फाइनल मैच में इवान अमरीका की चोटी की खिलाड़िन बिली जीन किंग को हरा चुकी थी, किंतु अपने से ९ साल बड़ी मार्गरेट से मुकाबले की बात सोचकर उसे लग रहा था कि वह यह मुकाबला हार जायेगी. वह परेशान हो रही थी. मगर मैदान में उतरते ही वह यह भूल गयी कि मार्गरेट उससे बड़ी है और वह उससे अच्छी खिलाड़िन है. वह पूरे आत्म-विश्वास से खेली और मार्गरेट को हराकर टेनिस जगत में तहलका मचा दिया.

उसी वर्ष इवान को '१९७१ वर्ष का सर्वश्रेष्ठ आस्ट्रेलियाई' का खिताब मिला. उसके बेरेलान कस्बे के निवासियों और उसके प्रशिक्षक ने उससे जो आशा की थी, वह उसने पूरी कर दिखायी.

१९७५ में इवान गूलागोंग ने रोजर काउले से विवाह किया. मगर इसके बाद भी उसका टेनिस खेलना जारी रहा.

पप्पू स्कूल से अभी लौटा था. उसने बस्ता एक ओर फेंका और चप्पल दूसरी ओर. झट से लोटा भर पानी उसने पांवों पर उलीच लिया. पानी यहां-वहां फैल गया. कहीं-कहीं धूल ज्यों की त्यों रह गयी. पर इसे कौन देखता. सामने खाना रख दिया गया. कौर को पानी के सहारे गटकता गया. खाना खत्म. हाथ साफ कर वह शेखर के आंगन में पहुंच गया. दोनों चचेरे भाई. हमउम्र. साथ-साथ खेलना, साथ-साथ पढ़ना.



खेल खेल में

गोविंद झा

पप्पू ने पुकारा, "भैया, चलो गिल्ली-डंडा खेलें." दोनों गिल्ली-डंडा में माहिर थे. उसमें दोनों की जान बसती थी. आनन-फानन में दोनों तैयार. शेखर ने डंडा उठाया और पप्पू ने गिल्ली.

दांव कौन शुरू करे? पप्पू ने सिक्का उछाला. दांव शेखर को मिला. झट से शेखर ने गिल्ली को गुच्ची के बीच में रखा. पीछे से डंडा अड़ाकर उसने गिल्ली को जोर से उछाला. गिल्ली एक डग के भीतर ही गिर पड़ी. शेखर ने डंडा गुच्ची पर रख दिया. पप्पू ने गिल्ली फेंकी और वह डंडे पर टन्न से जा लगी. शेखर का दांव खत्म.

तब आया दांव पप्पू का. पप्पू ने भी उसी तरह गिल्ली उछाली. गिल्ली काफी दूर निकल गयी. शेखर ने गिल्ली गुच्ची की ओर फेंकी. पप्पू जोर से फटोर (हिट) मारने के लिए तैयार था. पर गिल्ली एकदम गुच्ची के नजदीक डंडे की दूरी के अंदर. पप्पू हाथ मलता रह गया.

अब फिर शेखर का दांव शुरू हुआ. इस बार गिल्ली जोर से उछली और काफी दूर निकल गयी. पप्पू ने उसे गुच्ची की ओर फेंका. शेखर इस बार सावधान था. उसने सधे हुए हाथ से फटोर लगाया. गिल्ली सर्र से काफी दूर निकल गयी. गिल्ली से गुच्ची तक की दूरी उसने नापी. पूरे बीस डंडे. इस बार वह जीत गया. पप्पू को काफी दूर से एक पांव पर रेंगते हुए गुच्ची तक आना पड़ा.

खेल में मजा आ गया. शेखर खुश था कि उसे पप्पू को हराने का मौका

मिला. पर इससे पप्पू निराश नहीं हुआ. उसने भी गिल्ली उछाली. गिल्ली हवा से बातें करती हुई शेखर के ऊपर से निकल गयी. शेखर हाथ मलता रह गया. उसने गिल्ली उठाकर गुच्ची की तरफ फेंकी. इस बार पप्पू ने सही अंदाज से गिल्ली को हिट किया. गिल्ली काफी दूर निकल गयी. लगभग चालीस डंडे की दूरी तक. उसे दो बार पटौर लगाने का मौका मिला. गिल्ली और भी दूर निकल गयी. यहां



से शेखर को रेंगकर गुच्ची तक आना पड़ा. वह हांफने लगा. धम्म से बैठ गया—थोड़ी देर सुस्ताने के लिए.

पप्पू भी बैठ गया. उसने कहा, "चलो, अब घर चलते हैं."

"इस भरोसे न रहना बच्चू, दांव दिये बगैर नहीं जा सकते."

"नहीं भैया, अब नहीं खेलेंगे. सवाल करने हैं." इतना कहकर पप्पू चलने को तैयार हो गया. पर शेखर ने रास्ता रोक लिया. बोला, "दांव देकर जाओ."

"अगर नहीं दिया तो?" पप्पू भी अकड़ गया.

"तो बत्तीसी तोड़ दूंगा," शेखर गुर्राया.

"बड़े आये बत्तीसी तोड़ने वाले!"

"खबरदार पप्पुआ!" और शेखर एकदम उससे भिड़ गया. हाथापाई शुरू हो गयी. शेखर बड़ा था और मजबूत भी. उसने पप्पू को जोर से धक्का दे दिया. पप्पू गिर पड़ा. उसकी कोहनी में चोट आ गयी. वह रोने लगा. शेखर वहां से भाग गया.

दूसरे दिन पप्पू फिर तरोताजा. जैसे कल शाम कुछ हुआ ही न हो. आदतन शेखर के घर पहुंचा. बोला, "शेखर भैया, चलो तालाब पर चलें." पर शेखर आज अभी तक सो रहा था या पता नहीं सोने का बहाना कर रहा था. इतने में शेखर की-मां आ गयी.

शेखर झट से उठ गया. तालाब की ओर चल पड़ा. पप्पू भी चल पड़ा. तालाब की ओर दोनों आगे-पीछे चल रहे थे—चुपचाप. दोनों स्नान करके लौटे और पढ़ने बैठ गये. पप्पू को जोर-जोर से पढ़ने की आदत थी. आज भी पढ़ रहा था. शेखर वहां से उठकर दूसरी जगह पढ़ने बैठ गया. पप्पू की मां ने यह देख लिया. उसने पूछा—"क्यों रे शेखी, क्या बात है?"

"देखो न चाची, कितनी जोर-जोर से पढ़ता है. सबक याद ही नहीं होता."

"क्यों पप्पू, धीरे क्यों नहीं पढ़ते?"

"मां, मैं तो रोज ऐसे ही पढ़ता हूं. मुझसे धीरे-धीरे पढ़ा ही नहीं जाता. पढ़ूं, तो पाठ याद नहीं रहता. ठीक है, अब मैं चुपचाप पढ़ूंगा." फिर दोनों पढ़ने लगे.

रात में दोनों एक ही लालटेन में पढ़ा करते थे. आज शेखर ने लालटेन जलाने में देर कर दी. पप्पू ने एक-दो बार आवाज दी पर कोई उत्तर नहीं मिला. हारकर पप्पू दालान में टुनिया-मुनिया के पास बैठ गया. टुनिया-मुनिया पप्पू की चचेरी

रहनें थी. शेखर काफी देर बाद आया. उसने पप्पू को नहीं बुलाया. पप्पू भी बैठा रहा. टुनिया-मुनिया कविता पढ़ रही थीं.

आओ बच्चो खेलें खेल,
इससे तन में फुर्ती आती,
बढ़ती भूख थकावट जाती,
कट जाता है मन का मैल.
आओ बच्चो खेलें खेल.

"पप्पू भैया, जरा यह लेख समझा दो." टुनिया ने कहा और किताब का वह लेख उसके सामने कर दिया. पप्पू पढ़ने लगा, "खेल, खेल होता है, खेल का असली मजा उसके खेलने में है, हार-जीत में नहीं. खेल में खिलाड़ी की चुस्ती, फुर्ती और उसकी कला की तारीफ की जाती है. हार-जीत तो खेल को कहीं न कहीं खत्म करने का एक सिलसिला है. जीतने पर न तो खुशी का ढिंढोरा पीटना चाहिए और न हारने पर आंसू बहाने चाहिए. ऐसा करने वाले खेल के मर्म को नहीं जानते."

मुनिया ने पूछा—"भैया, यह मर्म क्या होता है?"

"जमनियत."

"यानी कि मजा?"

"हां."

"तो इसका मतलब हुआ भैया कि खेल का मजा खेलने में है, हार-जीत में नहीं." टुनिया ने जानना चाहा.

"बिल्कुल."

"फिर तो हारने से जो मुंह फुलाकर बैठ जाते हैं, वे गलत हैं?" मुनिया ने पूछा.

"हां." टुनिया पप्पू से पहले टपक पड़ी.

●

दूसरे दिन पप्पू को काफी सवाल करने थे. हिसाब में वह कमजोर था. शेखर उसकी मदद करता था. वह हर बार उसे गणित मास्टर की पिटाई से बचा लेता था. पर आज बात दूसरी ही थी. पप्पू बहुत सहम रहा था. फिर भी वह शेखर के पास जाकर बैठ गया. शेखर उस समय गणित कर रहा था. उसने देखकर भी उसकी ओर नहीं देखा. पप्पू को जरूरत थी. उसने कहा—"भैया, आज गणित का घंटा है."

"मालूम है."

"एक सवाल हल करना है."

"कर लो." शेखर ने जवाब दिया.

"तुम कर दो न."—पप्पू ने आग्रह किया और स्लेट उसकी ओर बढ़ा दी.

"कहा न, मेरे पास टाइम नहीं है."

"बस भैया, आज तो कर दो. गणित मास्टर को तो तुम जानते ही छड़ी से चमड़ी उधेड़ देता है." इतना कहकर उसने स्लेट उसके करीब रख दी.

"जाओ कहीं के." कहते हुए उसने स्लेट उठाकर फेंक दी. स्लेट टुकड़े-टुकड़े हो गयी. पप्पू ने एक नजर स्लेट की ओर और एक नजर भैया की ओर डाली. काफी देर तक वह टुकुर-टुकुर ताकता रहा. फिर उसने टूटी स्लेट समेटकर



बस्ते में रखी और स्कूल चला गया.

गणित की कक्षा. मास्टर साहब आ गये. पप्पू का गला सूखने लगा. मास्टर साहब ने पूछा—"क्यों पप्पू, गणित का काम पूरा हो गया?" बस इतना काफी था. पप्पू की जबान पर ताला लग गया. मास्टर साहब की छड़ी सांप की जीभ की तरह लपलपाने लगी. हर बार पप्पू की आंखें बंद हो जातीं और शरीर सिकुड़कर धनुष बन जाता.

स्कूल की छुट्टी हो गयी. सभी अपने अपने घर की ओर चल पड़े. सबसे पीछे पप्पू भी घर चल पड़ा. सहसा किसी ने उसके कंधे पर हाथ रख दिया. पप्पू ने देखा और उसके मुंह से हठात् निकल गया—"भैया!" शेखर ने उसकी ओर देखा. पप्पू की आंखों से आंसू झरने लगे. शेखर का मन भर आया. वह अपनी अंगुलियों से उसके गाल पर लुढ़कती हुई एक बूंद को पोंछता तो दूसरी लुढ़क पड़ती. कमीज हटाकर उसने देखा. अभी भी छड़ी के निशान मिटे नहीं थे. वह गणित के मास्टर से अधिक अपने आपको कोसने लगा.

उसने कहा—"भैया पप्पू, मुझे माफ कर दे. गलती मेरी थी. उस दिन से न जाने मुझे क्या हो गया. लगता है कहीं मेरे मन में अपनी हार का ज्यादा दुख था. खेल की मस्ती को मैं बिल्कुल ही भूल गया. अब कभी ऐसा नहीं होगा."

पप्पू भैया की आंखों में देखने लगा. वहां प्यार और दोस्ती की छाया तैर रही थी. तनाव टूट चुका था. इस खुशी में पप्पू की पीठ की सिहरन कहीं बह गयी.

5/8 [illegible] भवन, जवाहर नगर, स्वामी विवेकानन्द मार्ग, गोरेगांव (प.) बम्बई-62

ये रही तुम्हारी चिट्ठियां

□ [illegible] फरवरी '77 के अंक में [illegible] के जीवन और मृत्यु के विषय में एक दिलचस्प [illegible] जो प्रकाशित हुई.

अब के कुछ पाठकों के पत्र भी मिल रहे हैं. अनेक पाठकों ने [illegible] की जिज्ञासा दिखायी है परन्तु उन्हें उपयुक्त ज्ञान नहीं है. सम्पादक महोदय से मेरा आग्रह है कि वे इस संबंध में विस्तृत जानकारी अपने पाठकों को दें. इस पत्र के माध्यम से मैं निवेदन करता हूं कि पाठक इस संबंध में मुझे कोई पत्र न भेजें क्योंकि मैं [illegible] से संबंधित नहीं हूं. [illegible] के पारिवारिक [illegible] थे, अतः मैं उनके विषय में सब कुछ व्यक्तिगत रूप से जानता था.—सुरेश कुमार, बिलासपुर.

□ 'पराग' का जुलाई अंक मिला. सबसे दिलचस्प 'विज्ञान में [illegible]' लेख लगा. सबसे मार्मिक कहानी 'दीनू काका' लगी, और [illegible] जी की [illegible] कथा का तो कहना ही क्या. अपने आप में बेजोड़ है. [illegible] मेरा आपसे एक अनुरोध है कि 'जादू की दुनिया' स्तम्भ फिर से शुरू करें.—[illegible], [illegible]

□ 'पराग' के विज्ञान विशेषांक, जून 1977 में 'जिन्दा लकड़ी बंजारे का ताल' पढ़ा. लेखक श्री [illegible] बधाई के पात्र हैं. मध्य प्रदेश के सागर नगर का तालाब आज लाखा बंजारे के बलिदान से हिलोरें ले रहा है, पर अपनी दुर्दशा और उपेक्षा की करुण कथा भी कह रहा है. जिस तालाब का पानी नगर के कुओं के माध्यम से हजारों लोगों की प्यास बुझा रहा है, उस तालाब में नगर पालिका की गन्दगी गिरती है. नगर की शोभा है यही तालाब आज कीचड़ मिट्टी से पट गया है. दलदल से भरा रहा है. जिला चिकित्सक के अनुसार उसका पानी रोगाणुओं से युक्त है. खेद है कि इस तालाब की ओर नगरवासियों और नगर-पालिका का ध्यान है ही नहीं, शासन भी उदासीन है. —कु. [illegible] दुबे, सागर.

खेल में क्या नहीं है ?

आम के आम गुठलियों के दाम





□ योगराज थानी



हर ऊंचे खिलाड़ी को अपने बचपन में यह वाक्य जरूर सुनना पड़ता है कि 'खेल में रखा क्या है?' और जब वही खिलाड़ी ऊंचाइयों पर पहुंच जाता है तो दूसरों को यह कहना पड़ता है कि 'खेल में क्या नहीं रखा है!'

खेल में क्या रखा है? आम तौर पर इसका मतलब यह निकलता है कि खेल कोई बेकार की चीज है. इससे बचना चाहिए. लेकिन दरअसल जो लोग खेल के महत्त्व को जानते हैं, वे मन ही मन उन लोगों पर हंसते हैं, जो कहते हैं कि 'खेल में रखा क्या है?'

हो सकता है कि तुम सबको भी अक्सर यह वाक्य सुनना पड़ता हो, लेकिन निराश न हो. तुम्हें एक न एक दिन कुछ न कुछ तो जरूर मिलेगा. जैसी साधना वैसा ही पुरस्कार. जितना बड़ा संघर्ष उतनी बड़ी सफलता. माना कि १०० खिलाड़ियों की दौड़ में जीत तो एक की ही होगी लेकिन ९९ का भी अपना एक महत्त्व होता है. ओलिंपिक खेलों का मूल आदर्श भी यही है कि उसमें महत्त्व हार-जीत का नहीं, बल्कि भाग लेने का है. आप जिंदगी की दौड़ में हर बाजी जीतें यह जरूरी नहीं, जरूरी यह है कि आप उसके



1. [illegible]
2. [illegible]
3. [illegible]
4. [illegible]

छाया : [illegible]
रेखांकन : [illegible]

लिए जी-जान से संघर्ष करें.

और मान लीजिए कि खेल से कुछ भी नहीं मिला तो कम से कम खेलने से आपकी सेहत तो ठीक-ठाक रहेगी. तन मजबूत होगा, तो मन अपने आप मजबूत होगा और जब ये दोनों चीजें—तन और मन मजबूत हों तो धन आपको छोड़कर कहां जा सकता है. तभी तो एक बार स्वामी विवेकानंद ने कहा था कि गीता पढ़ने से फुटबाल खेलना ज्यादा जरूरी है.

खेल से तन और मन मजबूत होता है, यह बात तो झट से समझ में आ जाती है, लेकिन खेलने से धन कैसे प्राप्त होता है, यह बात शायद आपको कुछ अजीब-सी लगे. तो आइये पहले उन्हीं खिलाड़ियों से मिलें जो खेलते-खेलते करोड़पति हो गये.

करोड़पति खिलाड़ी

खिलाड़ी दो तरह के होते हैं. एक शौकिया और दूसरे पेशेवर. शौकिया खिलाड़ी उन्हें कहते हैं जो शौक के लिए खेलते हैं और पेशेवर खिलाड़ी उन्हें कहते हैं जो अपना खेल दिखाने के लिए मुंह-मांगे दाम मांगते हैं. दोनों तरह के खिलाड़ियों की अलग-अलग दुनिया और अलग-अलग प्रतियोगिताएं होती हैं. ओलिंपिक, एशियाई और राष्ट्रकुल खेलों में केवल शौकिया खिलाड़ी ही भाग ले सकते हैं. इनमें पेशेवर खिलाड़ियों को भाग लेने की इजाजत नहीं मिलती. लेकिन वर्ल्ड कप (फुटबाल), विंबलडन, पेशेवर मुक्केबाजी, गोल्फ, मोटर रेस आदि खेलों में पेशेवर खिलाड़ियों का ही बोलबाला रहता है.

आपने विश्व हैवीवेट चैंपियन मोहम्मद अली (जिनका पहला नाम कैसियस क्ले था) का नाम तो सुना ही होगा. लेकिन शायद आपको यह मालूम नहीं होगा कि उनको एक मुकाबले के लिए 1 करोड़ रुपये से भी अधिक धन मिलता है. 1971 में मोहम्मद अली और जो फ्रेजियर के बीच चैंपियनशिप का मुकाबला हुआ था. मुकाबला शुरू होने से पहले यह कह दिया गया था कि भले ही

कोई जीते या हारे, हरेक मुक्केबाज को २५ लाख डालर (यानी १ करोड़ ७५ लाख रुपये) मिलेंगे.

मोहम्मद अली की उम्र इस समय ३५ साल की है. १७ मई, १९७० को डेंह ओवर (अमरीका) में मोहम्मद अली और स्पेन के एक मामूली से मुक्केबाज एल्फ्रेडो इवान गलिन्दा के बीच मुकाबला हुआ था और इसमें भी मोहम्मद अली को १ करोड़ २० लाख रुपये मिले.

इसी तरह बुल फाइटिंग (सांड़ की लड़ाई) और मोटर रेस आदि कितने ही ऐसे खेल हैं, जिनमें कितने ही खिलाड़ियों ने बेहिसाब पैसे कमाये हैं.

फुटबाल-सम्राट पेले

कुछ खिलाड़ी अपने खेल की बदौलत इतने मशहूर हो जाते हैं कि लोग उस देश के प्रधान मंत्री या राष्ट्रपति का नाम भले ही न जानते हों, लेकिन उस खिलाड़ी और उसके देश का नाम जरूर जानते हैं. फुटबाल जगत में आज जिन देशों का बोल-बाला है—जैसे ब्राजील, पश्चिम जर्मनी, स्पेन, चिली, इंग्लैंड, इटली, उरुग्वे आदि, उनमें ज्यादातर पेशेवर खिलाड़ी ही भाग लेते हैं. १९७० में ब्राजील ने तीसरी बार वर्ल्ड कप पर अधिकार किया था और इसका सारा श्रेय पेले को ही था. किसी फुटबाल खिलाड़ी की वार्षिक आमदनी २० लाख रुपये हो सकती है, इस बात पर भले ही आप यकीन न करें, लेकिन सच्चाई तो सच्चाई ही है.

एक जमाने में जैसे यह कहा जाता था कि जिस टीम में हाकी के जादूगर ध्यान-चंद जैसा खिलाड़ी हो, उसे हरा सकना मुश्किल है, उसी तरह कुछ साल पहले तक यह कहा जाता था कि जिस फुटबाल टीम में पेले जैसा खिलाड़ी हो उसे हरा सकना मुश्किल है. ब्राजील का एक क्लब है जिसका नाम है सानतोस क्लब. पेले इसी क्लब के खिलाड़ी रहे हैं. कहते हैं कि एक बार इटली के एक क्लब ने सानतोस क्लब के सामने यह प्रस्ताव रखा कि अगर आप सिर्फ एक साल तक पेले को इटली की ओर से खेलने की इजाजत दे दें, तो हम आपको २१ लाख रुपये दे सकते हैं. इतना ही नहीं इसकी देखादेखी अर्जेंटीना के एक क्लब ने यह सुझाव दिया कि यदि आप पेले को एक साल के लिए हमें दे दें तो हम ब्राजील सरकार को पेट्रोल और कोयले से भरा-पूरा जहाज दे सकते हैं. इन प्रस्तावों पर सरकारी स्तर पर विचार किया गया और आखिर



दुनिया का सर्वश्रेष्ठ फुटबाल खिलाड़ी, पेले, जिसे ब्राजीलवासी अपने देश का देवता मानते हैं.



लॉन टेनिस की महिला खिलाड़ी बिली जीन किंग ने नाम और दाम दोनों कमाये हैं.

में यह फैसला किया गया कि हम किसी भी कीमत पर खेलों को बेचने के लिए तैयार नहीं हैं. खेल हमारे देश का देवता है और देवता को किसी भी कीमत पर बेचा नहीं जा सकता.

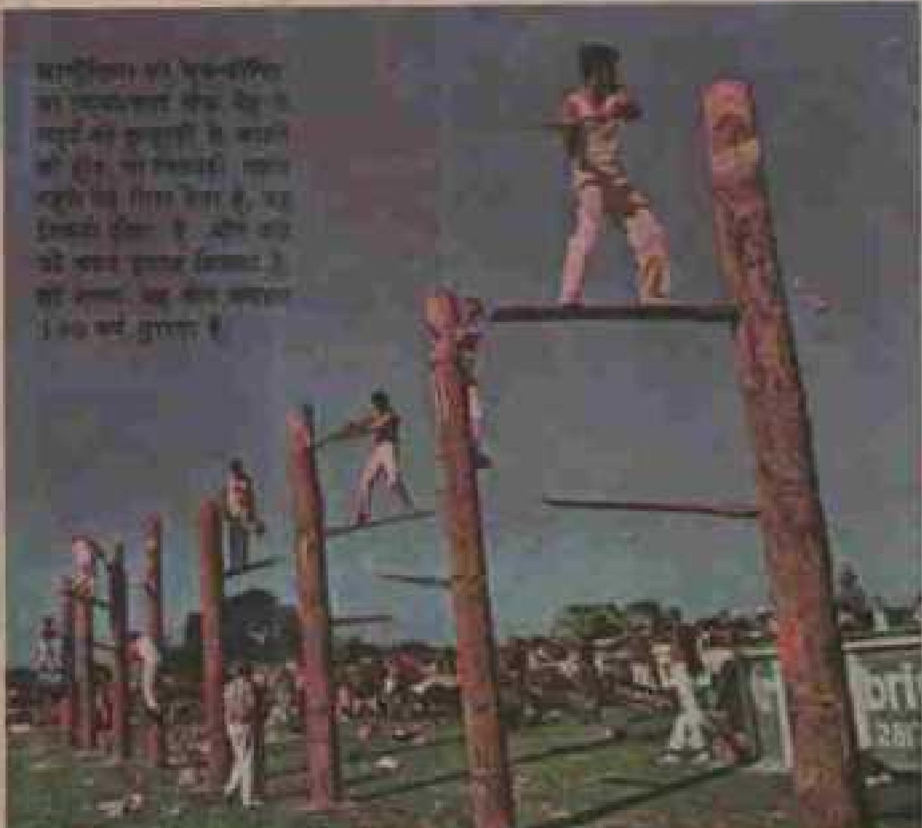
अब लगे हाथ जरा लॉन टेनिस के चोटी के खिलाड़ियों की एक झलक भी प्राप्त कर ली जाये. यह तो आप जानते ही होंगे कि विम्बल्डन को लॉन टेनिस की सबसे बड़ी प्रतियोगिता माना जाता है. शुरू-शुरू में लॉन टेनिस में पेशेवर और शौकिया खिलाड़ियों के अलग-अलग मुकाबले होते थे. लेकिन पिछले कुछ वर्षों से दुनिया की लगभग सभी बड़ी प्रतियोगिताओं को 'खुली प्रतियोगिता' का रूप दे दिया गया है. अब इसमें दोनों तरह के खिलाड़ी (शौकिया और पेशेवर) भाग ले सकते हैं. जो खिलाड़ी एक वर्ष में सभी चार बड़ी प्रतियोगिताएं (आस्ट्रेलियाई, अमरीकी, फ्रांसीसी और विम्बल्डन) जीत जाता है, उसे ग्रैंड स्लैम का गौरव प्राप्त होता है. आस्ट्रेलिया के राड लेवर दो बार यह गौरव प्राप्त कर चुके हैं और उन्होंने केवल एक वर्ष में टेनिस खेलकर दो लाख डालर कमाये थे. इसी तरह अमरीका के जिमी कोनार्स, रूमानिया के इली नस्तासे, स्वीडन के ब्जान बोर्ग और महिलाओं में अमरीका की श्रीमती बिली जीन किंग और क्रिस एवर्ट भी टेनिस से लाखों कमा चुकी हैं.

अब आप कहेंगे कि ये सब तो विदेशी खिलाड़ियों की बात हुई. भारत में तो आज तक कोई भी खिलाड़ी खेल से लखपति नहीं हुआ. तो इसका सीधा-सा उत्तर यह है कि भारत के खिलाड़ी पैसा कमाने के उद्देश्य से नहीं, बल्कि प्रतिष्ठा प्राप्त करने के उद्देश्य से खेलते हैं. हमारे यहां सभी खिलाड़ी शौकिया खेलते हैं. हां, अच्छे खिलाड़ियों को अच्छी नौकरियां मिल जाती हैं, नौकरियों में जल्दी तरक्की मिल जाती है. चोटी के खिलाड़ियों को 'अर्जुन पुरस्कार' से अलंकृत किया जाता है. बहुत से खिलाड़ी पद्मभूषण और पद्मश्री भी प्राप्त कर चुके हैं.

आज देश का ऐसा कौनसा खेल-प्रेमी है जो स्वर्गीय गामा, हाकी के जादूगर ध्यानचंद, फ्लाइंग सिख मिल्खा सिंह, पहली बार संसार के सर्वोच्च शिखर पर चढ़ने वाले तेनजिंग नोरके, सात समुद्र पार करने वाले मिहिर सेन के नाम से

(शेष पृष्ठ ८० पर)

ये अद्भुत खेल



ऑस्ट्रेलिया की 'वुड-चॉपिंग' [illegible] 1,000 वर्ष पुराना है.



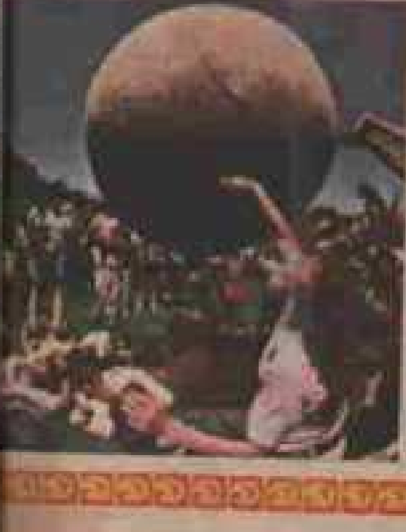
यह है 'बूफिंग', अमरीका का नया खेल. तलवारों जैसे ये आला, बूफर इतने हल्के और मुलायम होते हैं कि इनसे किसी को मारा जाये तो चोट नहीं लगती, लेकिन आवाज़ खूब ज़ोरदार होती है. किसी पर गुस्सा आये तो लड़ाकू मौज भी इन्हें बूफर ले. तुम भी खुश, वह भी खुश.



कलीनिया सिटी, मोन्टाना (अमरीका) में हर साल 'खतरनाक दौड़' होती है. ठीक तांगा दौड़ की तरह दुनिया की इस सबसे बड़ी चिड़िया को बाकायदा गाड़ी में जोतकर बलानुमा चाबुक से खदेड़ा जाता है. यह रंगीन खेल बस देखते ही बनता है. ←

'हैकर-हीलर' या पलवाकशी का अमरीकी रूप! पेड़ों के ठूंठों पर से एक-दूसरे को गिराने की कोशिश करते हुए खिलाड़ी खेलने से पहले मुंह तरह-तरह से रंग लेते हैं. →





←

विशाल गेंद से खेला जाने वाला खेल—'वॉर्बिट'. एक टीम गोल घेरा बना लेती है और बीच में दूसरी टीम बैठ जाती है. बैठे हुए खिलाड़ी गेंद को पैरों से उछालकर घेरे से बाहर फेंकने की कोशिश करते हैं और खड़े हुए खिलाड़ी गेंद को बाहर न जाने देने की. सभी खिलाड़ी यह कोशिश भी करते हैं कि गेंद जमीन पर न गिरने पाये. यह खेल भी अमरीका का ही शुरू किया हुआ है.

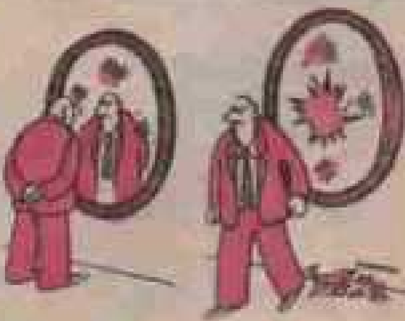
दूसरी पत्रिकाओं से



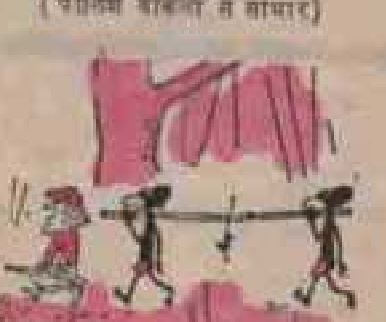
अंकल, आपको मैं अपने साथ नहीं खिलाऊंगा. आप आउट होने वाले तो हैं नहीं, क्योंकि तुम्हें स्टंप नहीं दिखता. गेंद कहां फेंकें?
(मराठी मासिक 'किशोर' के सौजन्य से)



मैं कार खरीदने जा रहा हूं—भीख मांगने के लिए पैदल घूमते-घूमते मैं तंग आ गया हूं!
('वीकएंड' के सौजन्य से)



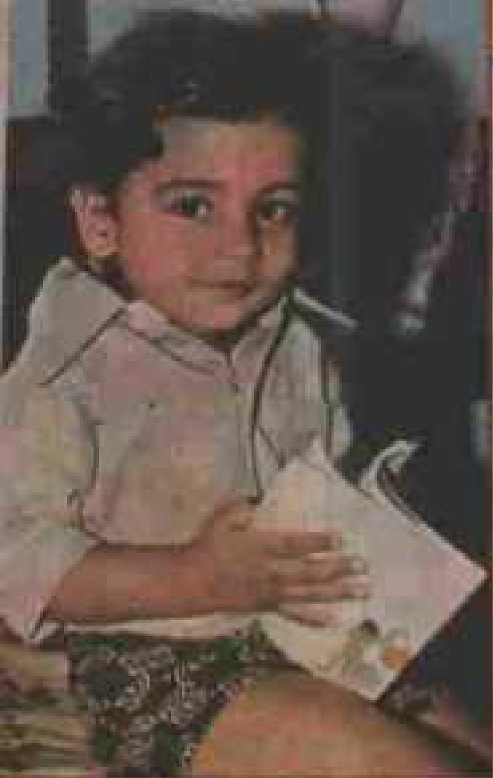
वाह रे मुक्केबाज !
('कॉमिक वीकली' से साभार)



शिकार में जो मिल जाये
(उर्दू मासिक 'खिलौना' से साभार)



मम्मी, आपकी चाल डैडी से अच्छी है!
(उर्दू मासिक 'खिलौना' से साभार)



इस चित्र का शीर्षक क्या हो?

इस चित्र को देखकर तुम्हें कविता की कोई पंक्ति याद आ जाये या तुम स्वयं कोई अच्छा-सा शीर्षक बना सको तो उसे एक पोस्ट कार्ड पर लिखकर तुरंत हमारे पास भेज दो. सबसे बढ़िया शीर्षक पर पुरस्कार दिया जायेगा. शीर्षक के कार्ड 20 अगस्त तक इस पते पर भेजो—संपादक, पराग (शीर्षक प्रतियोगिता-102), 10 दरियागंज, नयी दिल्ली-110002.

छाया : शील

शीर्षक प्रतियोगिता नं. ९९ का परिणाम

पुरस्कृत शीर्षक:

'मम्मी-पापा में हो गयी जंग,
मैंने कर लीं आँखें बंद.'

प्रेषक :

बॉबी सिंह,
द्वारा
श्री वाई. पी. सिंह,
बी 38, फर्टिलाइजर
कालोनी, गोरखपुर
(उ. प्र.)



अन्य प्रशंसित शीर्षक :

- मां लायी कागज की चिड़िया;
  आंख मींचकर बैठी बिटिया.
  —सुरेंद्र सिंह, भिलाई नगर.
- केक उड़ाकर दूध गिराकर करके खूब शैतानी,
  कितनी भोली बन बैठी है शैतानों की नानी!
  —अशोक सामंत, मुगलसराय.
- पलकों में खुशियों के फूल हुए बंद,
  फूल कभी भंवरों से छिपाता मकरंद.
  —सुरिंदर कौर, कलकत्ता.
- चुनावों का इस पे कुछ ऐसा नशा छाया
  दादा की कुर्सी पे अपना हक जमाया.
  —इंदर दर्द, कांगड़ा.
- बैठी हुई ऐसे है आंखों को मूंदे,
  जैसे मुंह पर कोई छिड़क रहा हो पानी की बूंदें.
  —महाराज शरण, आगरा.


बिल्लू
प्राण
बजरंगी, आज तुम्हारे तेवर चढ़े नजर आ रहे हैं. अरे भाई, आजादी वाले दिन मूड नहीं बिगाड़ा करते.
वह चूहा एक साल पहले दस रुपये उधार ले गया था, मगर लौटाने का नाम ही नहीं लेता. अब आप ही बताइये, ताऊजी, गुस्सा नहीं आयेगा तो और क्या होगा?
अरे, तुम पकड़ कर वसूल क्यों नहीं करते?
वसूल तो तब करूं न, जब वह मेरे हाथ आये.
उस्ताद! आज तुम यहीं डटे रहो. अब भी वह नजर आये, पकड़ कर उस की पैंट कमीज उतार लो. अपने आप पैसे देगा.
यही सोच कर बैठा हूं.
उस्ताद! वह रहा!
बाप रे! बजरंगी?


स्वतंत्रता दिवस के उपलक्ष में
दौड़ प्रतियोगिता ... पहला इ
फर्स्ट !
फर्स्ट !
यह लो पहला इनाम, सौ रुपये !
अब बोल बच्चू !
अररर
जा तू हार कर बाज आ.
यह लो अपने दस रुपये.



लार्ड लपझप

[illegible]

□ के. पी. सक्सेना

हमने जब सातवीं क्लास में दाखिला किया तो पता लगा कि वे कई साल से सातवीं में खूंटा गाड़े बैठे थे. यह भी मालूम हुआ कि वे फेल नहीं होते थे मगर ठीक इम्तहान के दिनों में या तो उन्हें छींकें आने लगतीं या पेट गुड़गुड़ाने लगता था या दूर का कोई रिश्तेदार मर जाता. हम नये-नये प्राइमरी स्कूल छोड़कर आये थे और ज़रा डरे-डरे रहते थे. लेकिन उन्हें क्लास में देखकर पहले दिन ही हंसी छूट गयी. वैसे उम्र में वे हमसे कुछ ही बड़े थे, मगर वे बेइन्तहा मोटे थे. सफेद रेशम की कमीज़ और रेशमी पैंट. गले में गुलनार टाई और सिर पर सफेद सीपियों का बना हुआ पनामा हैट.

पता चला कि वे किसी बहुत बड़े ताल्लुकेदार साहब बहादुर की अकेली यानी इकलौती औलाद हैं जो बिना रोक-टोक मलाई-मक्खन, मावा और दूध मेवे खा-खाकर माशाअल्लाह हो गये हैं. बचपन में ही चेहरा इतना फूल-कुप्पा हो गया था कि आंखें बहुत छोटी नज़र आती थीं. पता ही नहीं लगता था कि क्लास में सो रहे हैं या जाग रहे हैं.

नीले रंग की बिना छत वाली खुली मोटर में रखकर उन्हें स्कूल लाया जाता था. दो नौकर खाकी वर्दी पहने क्लास के बाहर बैठे रहते थे और हर पीरियड की समाप्ति पर घंटी बजते ही बादाम का हलवा और संतरे लेकर दौड़ पड़ते थे कि वे पढ़ते-पढ़ते थक गये होंगे. हम लोगों को इन्टरवल में भीगे चने खाने को मिलते थे. कई बार हमारी इच्छा होती थी कि उन्हें भी भीगे चने खिलायें, मगर हमारा शैतान साथी इकरामउल्ला यह कहकर टाल देता कि हाथी चने नहीं खाता!

वे किसी से नहीं बोलते थे और छुट्टी होते ही उनके नौकर उन्हें गाड़ी में रखकर वापस ले जाते. हाजिरी के रजिस्टर में उनका नाम—लार्ड लख्ते-जिगर नूरे-खान्दान मीर मुन्ना सरफराज अली-अहद लिखा था. मास्साब 'मीर मुन्ना' कहकर उनकी हाजिरी पुकारते थे और हमने उन्हें 'लार्ड लपझप' नाम दे रखा था.

छुट्टी की घंटी के बाद खेल वाले मौलवी साहब हमें विकेट, बल्ले और गेंद दे देते और हम लोग स्कूल के छोटे-से मैदान में जमकर क्रिकेट खेलते. एक दिन देखते क्या हैं कि नन्हें मियां लार्ड लपझप दोनों हाथों से अपनी रेशमी पतलून

उचकाये खड़े हैं. उनके दोनों नौकर भी वहीं मौजूद थे.

'हम भी हेलना हाहते हैं! हिरकट हिलायेंगे हमें?'

मारे मोटापे के हांफने के कारण उनके हर शब्द में 'ह' निकलता था. हम सबकी हंसी छूट गयी. 'हाय बच्चो! हाथी क्रिकेट खेलेगा!' एक ने कहा.

'बेचारा कई दिन में ठहर-ठहर कर एक रन ले पायेगा!' दूसरे ने टोका.

'इतने चौड़े खिलाड़ी के लिए विकेट की जगह चारपाई गाड़नी पड़ेगी!' किसी और ने ठहाका लगाया.

लार्ड लपझप की छोटी-छोटी आंखों में आंसू आ गये. शायद उनकी अमीरी और हमसे दूर-दूर रहना पहली बार उन्हें टीस गया था.

'मोटर ले आओ. हम हापस हलेंगे.' उन्होंने नौकरों से कहा और वे दुखी मन से चले गये.

कई हफ्ते तक लार्ड लपझप क्लास में नहीं आये. फिर अचानक आये तो पहले से काफी घटे नजर आ रहे थे. उनके साथ में नौकर भी नहीं थे, कार भी नहीं थी. आते ही उन्होंने हम सबसे दोस्ती कर ली और साधारण बच्चों की तरह भीगे चने खाने शुरू कर दिये. उनके पिता नवाब तालुकेदार साहब परेशान थे और कई बार अपनी कार पर उन्हें देखने आते थे. लार्ड लपझप हमारे साथ क्रिकेट भी खेलने लगे और ढेले मार-मार कर तोड़े गये कच्चे-पक्के अमरूद भी खाने लगे. उसी वर्ष वे सातवीं कक्षा पास भी कर गये.

लार्ड लपझप का शरीर काफी चुस्त हो गया था और आवाज भी साफ निकलने लगी. धीरे-धीरे वे क्रिकेट पर हावी होते गये और इतनी तेज गेंद फेंकने लगे कि हमारा उनके सामने ठहरना कठिन हो गया. बल्लेबाजी भी बढ़िया करने लगे. नवीं क्लास के बाद हम बरेली छोड़कर गोरखपुर आ गये. इकराम-उल्ला हमें चिट्ठी में लार्ड लपझप के बारे में लिखता रहता था. अब उन्हें सब सरफराज कहते थे. कालेज में सरफराज ने क्रिकेट में सबके छक्के छुड़ा दिये. बी. ए. के बाद उनके पिता ने उन्हें इंग्लैंड भेज दिया.

अखबारों में पढ़-पढ़कर हम दंग रह गये कि इसी सरफराज ने, जिसे हम लार्ड लपझप कहते थे, इंग्लैंड में बड़ों-बड़ों को नानी याद दिला दी. उनकी पेस बॉलिंग (तेज गेंद) पर हमारे दर्शक झूम-झूम उठते थे. अंत में सरफराज ने लंदन में शादी करके कराची (पाकिस्तान) में घर बसा लिया. अब वे वहीं डिप्टी कमिश्नर हैं. क्रिकेट के खिलाड़ी आज भी उनकी दुआ लेने आते हैं. हमारी उन की मुलाकात दो साल पहले, तीस बरस बाद, दिल्ली में हुई. बढ़िया सूट, सुनहरा चुस्त बदन और कनपटी पर सफेद बाल. सरफराज ने हमें सीने से भींच लिया. उनके लड़कों ने हमें अदब से सलाम किया.

'कहो लार्ड लपझप, बहुत ऊंचे हो गये क्रिकेट में, यार!' हमारी आंखों में आंसू छलछला आये.

'चुप बे! हाथी कहीं क्रिकेट खेलता है? हम तो कई दिन में एक रन ले पाते हैं, बेटे!' सरफराज ने हंसकर कहा. तीस साल पहले चुभोया गया कांटा आज भी जैसे उनके दिल में धंसा था.

176/11, मुईन रोड, लखनऊ-226001

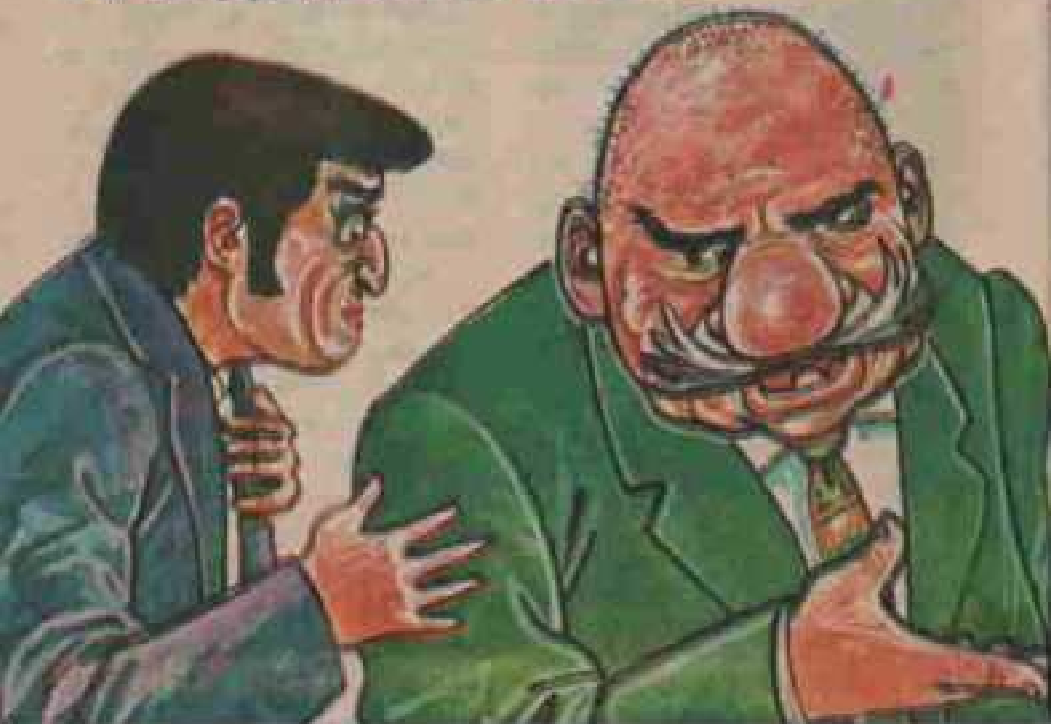
[illegible]

अब तक आपने पढ़ा :

चौधरी [illegible] सिंह [illegible] पाकिस्तान के एक [illegible] गांव का रहने वाला था. [illegible]

[illegible]

[illegible]



सवेरे तैयार होकर चौधरी हरखम के साथ आफिस जाने को निकला तो हरखम चौंक उठा, "यह क्या?"

चौधरी ने बड़े स्वाभाविक ढंग से कहा, "तोता."

"इस पिंजरे के साथ आफिस जायेंगे?"

"क्यों? तोता बुरा लगता है?"

"पर पिताजी..." हरखम झुंझला उठा.

"अपनी खिड़की पर लटका दूंगा तो मेरे आफिस की शोभा बढ़ेगी."

[illegible]

"मुझे शोभा नहीं चाहिए." हरखम का चेहरा लाल पड़ कर उतर आया था, "मेहरबानी कर के आप पिंजरे को अपनी जगह पर ही रहने दें."

चौधरी ने पिंजरे को ऊंचा किया और तोते के साथ बात करता हुआ आगे बढ़ा, "संतिराम, तुझे भी मेरे बिना अकेले रहना पड़ेगा. पर चिंता मत कर आज



धारावाहिक उपन्यास
सातवीं किस्त

मैं जल्दी घर लौट आऊंगा."

हरखम काम में डूबने लगा कि तभी [illegible] मिसेज मेहताजी ने अपनी खिड़की में से आवाज लगायी. हरखम चौंक उठा. चौधरी ने भी आंखें उठायीं. तब तक मिसेज मेहताजी नीचे आकर हरखम के सामने खड़ी हो गयी थीं.

"कहिए?" हरखम को पूछना पड़ा, "आपको क्या तकलीफ है?"

उत्तर में मिसेज मेहताजी ने बटुवे में से [illegible] के तीन दाने निकाले और हरखम की हथेली पर रख दिये.

"इनका मैं क्या करूं?" हरखम ने बेवकूफ की तरह सवाल किया.

मिसेज मेहताजी ने शांतिपूर्वक कहा, "आपकी खिड़की में से [illegible] आये थे, इसलिए मैंने वापिस लौटा दिये."

"हूं! मेरी खिड़की में से किसने फेंके?"

मिसेज मेहताजी की अंगुली चौधरी की दिशा में उठ गयी. हरखम ने चौधरी की ओर देखा तो वह चोर की तरह [illegible] खड़ा था. कुछ ही देर में उसने [illegible] के चार दाने निकाले और मिसेज मेहताजी की हथेली पर रख दिये.

"यह क्या?" वह बोल उठी.

चौधरी ने शांतिपूर्वक उत्तर दिया, "कल शाम आपकी खिड़की में से आये थे, इसलिए वापस कर रहा हूं." और [illegible] को [illegible] 'थैंक्यू' कहना चाहिए, इसलिए उसने [illegible] 'थैंक्यू' भी कह डाला.

मिसेज पेस्तन जी स्तब्ध रह गयीं. इस मौके का लाभ उठाकर हरबंस उनपर बरस पड़ा, "मिसेज पेस्तन जी, ऐसी बचकाना हरकतें आपको बिलकुल शोभा नहीं देतीं. एक तो आप मेरे पिता पर मटर के दाने फेंककर उन्हें परेशान कर रही हैं और ऊपर से मेरे पिता जी को ही बदनाम करती हैं! बड़ी शर्म की बात है."

इतना कहकर चौधरी को कार में धकेल कर हरबंस भी उसकी बगल में बैठ गया. शोफर ने कार स्टार्ट की. कुछ ही देर बाद वे दफ्तर में थे.

●

चौधरी ने अपनी रिवॉल्विंग चेयर में बैठने के बाद दो-तीन बार झटके दिये और एक-एक झटके में दो-दो चक्कर लगा डाले. इस ऑफिस में यदि कोई चीज उसे सबसे अच्छी लगी थी, तो वह थी रिवॉल्विंग चेयर. वह कुर्सी यदि न होती तो चौधरी शायद आज यहां दिखता भी नहीं.

वह चौथी बार झटका देने जा रहा था कि उसके कान से आवाज टकरायी, "मैं अंदर आ सकती हूं?" उसने केबिन के दरवाजे की ओर देखा तो मिस लिली मुस्करा रही थी. चौधरी खड़ा होकर दरवाजे तक दौड़ गया. मिस लिली के हाथ में से दो बंडल लेकर टेबल पर रख दिये. मिस लिली अंदर आयी. चौधरी ने एक कुर्सी भी खींच दी. मिस लिली ने कुर्सी पर जगह लेते हुए कहा, "थैंक्यू."

"हलेरे की!" चौधरी सोच में पड़ गया.

"क्यों, क्या हुआ?"

"भूल गया."

"क्या?"

"कोई थैंक्यू कहे तो मुझे क्या कहना है?" उसके साथ चौधरी बगल की कुर्सी पर बैठ गया.

"चौधरी साहब," मिस लिली ने प्यार से कहा, "आपकी जगह सामने की कुर्सी पर है."

"और यहां बैठूं तो?"

"यह आपको शोभा नहीं देगा," मिस लिली ने उसे समझाया, "आप इस कंपनी के मालिक हैं."



"वाह," चौधरी बोला, "मैं इस कंपनी का मालिक हूं और अपनी मर्जी से जहां चाहूं बैठ भी नहीं सकता!"

चौधरी के लिए आज मिस लिली नया काम लेकर आयी थी. वह भी कल जैसा ही आसान था. टेबल पर पड़े बंडलों को खोलते हुए उसने बड़े लिफाफे और परिचय-पुस्तिकाएं अलग-अलग कीं. इन पुस्तकों में 'धम-धम' कंपनी में बनने

वाले अलग-अलग आदमियों का परिचय था. चौधरी को आज शाम तक ये सब परिचय-पुस्तिकाएं अलग-अलग लिफाफों में डालकर हर लिफाफे पर २० पैसे का टिकट चिपकाना था.

"मिस लिली ने एक लिफाफा तैयार कर उसकी ओर देखा और पूछा, "ओ. के.?" चौधरी ने कहा, "हां, यह तो ओ. के., पर तुम्हारी अंगुली में चिपकी यह अंगूठी ओ. के. नहीं है."

मिस लिली जरा चमकी, पर दूसरे ही क्षण हंसते हुए उसने कहा, "यह तो जैसी तनखा वैसी अंगूठी."

"तुम्हें कितनी तनखा मिलती है?"

"सिर्फ पौने दो सौ रुपये," कहते हुए मिस लिली का चेहरा गरीब हो गया.

"पौने दो सौ रुपये तो बहुत होते हैं," चौधरी बोला, "उसमें तो कम से कम चार अच्छी अंगूठियां खरीदी जा सकती हैं."

"फिर मैं खाऊंगी क्या?" मिस लिली का स्वर दयनीय हो गया, "मेरे पिता नहीं हैं, बूढ़ी मां और बहनें हैं. बहनों के स्कूल का खर्च ही हर महीने ५० रुपये होता है. फिर घर का किराया, बिजली का बिल, राशन, धोबी का खर्च, दवादारू का खर्च . . ."

चौधरी को दया आ गयी. उसने कहा, "मैं आज ही हरिया से बात करूंगा."

मिस लिली बाहर निकल गयी. दूसरे ही क्षण वह वापस दिखायी पड़ी. "आप किससे बात करेंगे?"

"श्रीमान हरबंस चौधरी से," चौधरी ने अपनी भूल सुधारी.

मिस लिली के जाते ही फतहचंद लीडर केबिन में दाखिल हुआ और सीधा आकर कुर्सी पर बैठ गया.

"खड़े हो जाओ." चौधरी दहाड़ा.

फतहचंद लीडर चौंक कर खड़ा हो गया.

"दरवाजे तक जाओ."

चुपचाप वह दरवाजे तक चला गया.

"अब इजाजत मांगो."

"काहे को?"

"अंदर दाखिल होने को."

फतहचंद लीडर ने नम्रतापूर्वक पूछा, "क्या मैं अंदर आ सकता हूं?"

चौधरी ने उसे इजाजत दे दी. फतहचंद लीडर आगे बढ़कर कुर्सी पर बैठ गया. वह कुछ नर्वस लग रहा था. चौधरी को पहली नजर में उसने सीधा-सादा मान लिया था, कम से कम इतना कड़ा तो नहीं ही समझा था. कल से उसके दिमाग में एक बात घूम रही थी. कामगारों पर धाक बिठाने के लिए हरबंस ने चौधरी को यहां बिठाया था, ताकि उससे डरकर कामगार हरबंस का घेराव करने की हिम्मत न करें और घेराव के बिना काम चलने वाला नहीं था. वेतन बढ़ाने की मांग पिछले डेढ़ साल से टल रही थी.

इस पर उसने आज सुबह ही अपने साथियों के साथ विचार किया था और सब एक निर्णय पर पहुंचे थे. चौधरी के यहां रहते हुए कोई भी कदम उठाना मुमकिन नहीं था. घेराव भी एकदम निष्फल रहेगा. परन्तु यदि चौधरी को अपने पक्ष में किया जा सके, तो अच्छे परिणाम की काफी संभावना थी. और यह विचार फतहचंद लीडर को बेहतर लगा था. चौधरी का दिखावा भले ही पहाड़ जैसा हो, उसका मन तो मक्खन

की तरह मुलायम था.

फत्तूचंद लीडर कुछ कह सके, इससे पहले ही चौधरी ने चुटकी बजायी और बाहर दौड़ गया. फत्तूचंद लीडर विस्फारित नेत्रों से देखता रहा. आकाश टूट पड़ा या धरती फट गयी? चौधरी की छलांग ऐसा ही कुछ कहती थी.

चौधरी मिस लिली की टेबल के पास आकर खड़ा हो गया.

"क्या हुआ?" मिस लिली कनखियों से इधर-उधर देखती हुई बोली. सारे कर्मचारी उसी की ओर देख रहे थे.

चौधरी ने सहर्ष कहा, "याद आ गया!"

"क्या याद आ गया?"

"कोई हमें 'थैंक्यू' कहे तो हमें 'नो मेंशन' कहना चाहिए. ठीक न?"

मिस लिली ने पतली-सी मुस्कान फैलायी.

चौधरी पुलकित मन से अपने केबिन में दाखिल हुआ तो उसे अपनी भूल समझ में आयी. वह जिस केबिन में दाखिल हुआ था, वह हरबंस का था. हरबंस ने फाइल में से सिर उठाते हुए आंख पर चश्मा लगाया.

"क्यों?"

कुछ सोचते हुए चौधरी उसके सामने की कुर्सी पर बैठ गया.

"हरिया," उसने शुरुआत की, "मान लो कि आज मैं मर जाऊं, तो तुम्हारी हालत क्या हो?"

"हूं!" हरबंस की आंखें फैल गयीं.

"मैं यह पूछता हूं कि तुम्हारे पास फूटी कौड़ी भी न हो, तुम्हें कमा कर मैं खिलाता होऊं और मैं अचानक मर जाऊं, तो तुम्हारा क्या हाल हो?"

"बुरे से बुरा," हरबंस के मुंह से निकल गया, "पर पिता जी, यह विचार आपको आया कैसे?"

"यही कहना है मुझे," कहते हुए वह मूल विषय पर आया. "अपनी लिली है न . . ."

"कौन? स्टेनो?"

"उसके पिता जी इस दुनिया में नहीं हैं और उसका हाल खराब है."

"तो मैं क्या करूं?"

"उसकी मदद करो."

"पिता जी," हरबंस ने स्पष्ट शब्दों में कहा, "यह आफिस है, धर्मशाला नहीं. यहां जो जितना काम करता है, उसे उसके मुताबिक वेतन मिलता है. समझे?"

"पर हरिया," चौधरी ने बहस जारी रखी, "लिली तो सारा दिन काम करती है, फिर भी एक अच्छी अंगूठी तक नहीं खरीद सकती."

हरबंस का मिजाज आपे से बाहर

(व्यंग्यचित्र : बी. जी. [illegible])





हो गया.

"पिता जी," वह कराह उठा, "आपको यहां काम नहीं करना हो, तो बैठे-बैठे माला जपिये. पर मेहरबानी कर मुझे शांति से काम करने दीजिए."

चौधरी अपमानित होकर अपने केबिन में चला आया. टिफिन आने पर आज चौधरी हरबंस के केबिन में खाना खाने भी नहीं गया. उसने अपना डिब्बा अपने केबिन में ही मंगा लिया. उसने खाया भी अकेले ही.

●

हरबंस को यह ठीक नहीं लगा. उसको पता था. उसके पिता स्नेहशील हैं. पर इस महानगर में जिंदा रहना हो तो हृदय को कुछ कड़ा भी करना पड़ता है. यह सही था कि जिस किसी की आर्थिक स्थिति डांवाडोल थी, पर सवाल यह था कि इस महंगाई के जमाने में किसकी स्थिति अच्छी थी? हरबंस दया करे तो किस-किस पर? कितने कामगारों पर दया करे? और यह सब चौधरी को कौन समझाये?

उसने मन ही मन तय किया कि रात के भोजन के बाद चौधरी को सब बातें खोलकर बतायी जायें. थोड़े प्रेम भरे शब्दों का प्रयोग कर यदि उन्हें समझाने का प्रयास किया जाये तो वे जरूर मान जायेंगे. आखिर उनका मन तो बच्चों जैसा निर्मल है.

पर हरबंस यहीं धोखा खा गया. बच्चों का मन निर्मल होता है, यह बात गलत नहीं, पर बच्चे जब जिद पर अड़ जाते हैं तो बड़े-बड़े शहंशाहों को भी झुकना पड़ता है.

रात को घर लौटने पर चौधरी और हरबंस अजनबी की तरह अपने-अपने कमरे में चले गये. दफ्तर से घर तक की कार-यात्रा में भी दोनों के बीच खामोशी छायी रही.

●

हरबंस रात के खाने के लिए डाइनिंग टेबल की कुर्सी पर बैठा तो उसे पता लगा, अब तक चौधरी पेट-पूजा खत्म कर अपने कमरे में घुस गया था. हरबंस बिना खाये ही चौधरी के कमरे में दाखिल हुआ. चौधरी तोते के पिंजरे में पानी डाल रहा था. उसने सिर्फ धोती पहन रखी थी और वह भी लुंगी की तरह.

हरबंस ने कुर्सी पर बैठते हुए बात शुरू की, "पिता जी!"

चौधरी ने उसकी ओर देखा तक नहीं.

"आपको मेरा यह स्लीपिंग सूट पसंद हो तो एक आपके लिए भी सिलवा दूं?"

चौधरी भड़क उठा, "मुझे कुछ भी नहीं चाहिए."

"पिता जी, आप नाराज हो गये?" मूल बात पर आने से पहले हरबंस उसे शांत करना चाहता था.

"खबरदार! जो मुझे पिता जी कहा." चौधरी और चिढ़ गया, "आज से मैं तेरा बाप नहीं और तू मेरा बेटा नहीं."

फिर भी हरबंस ने मुस्कराहट फेंकी, "पिता जी," उसने कहा, "पूत कपूत हो सकते हैं, पर पिता का मन तो विशाल होता है."

"मुझे पाठ न पढ़ा," चौधरी अब तक पिंजरे के पास खड़ा था. वहां से हरबंस के सामने आया और उसकी छाती पर अंगुली रखकर बोला, "जहां बेटा तेरे जैसा कसाई हो वहां बाप डूब न मरे तो क्या करे?"

"कसाई!" हरबंस चौंक उठा. आज तक उसने किसी की एक पाई भी नहीं खायी थी. किसी के साथ दगा नहीं की थी, नहीं किसी की रकम मारी थी. यही नहीं अनेक संस्थाओं को वह हर साल पांचेक हजार रुपये दान देता था. कॉलेज तथा स्कूल में दस से अधिक गरीब लड़कों को किताबें भी दिलवा देता था. और चौधरी कहता है—हरबंस कसाई है.

"मुझे आज पता लगा, तुमने सिर्फ जिली का ही नहीं, सबका बुरा हाल कर रखा है." चौधरी के स्वर में दर्द था.

चौधरी के अंतिम वाक्य ने उसे स्तब्ध कर दिया. "सबका मतलब, किस-का?" उसने पूछा.

"सबका मतलब सबका," चौधरी बोला, "तेरे आफिस के सभी कामगार रोते हैं. तुझे सबकी तनखा बढ़ानी होगी."

"हैं!" यह क्या चमत्कार हुआ था? चौधरी आफिस के वर्करों का लाउड-स्पीकर बन गया था. ऐसा कैसे हुआ? पर हरबंस को क्या खबर कि फतहचंद लीडर ने चौधरी के साथ दो घंटे बिता कर, चौधरी को वर्करों की समस्याएं बतायी थीं और उसे अपने पक्ष में खींच लिया था.

कुछ पल सोचने के बाद हरबंस समझ गया. विद्रोह की गंध उसे आ गयी. फतहचंद लीडर के जाल में वह पूरा फंस गया था. पर इतनी सरलता से वह अपनी हार स्वीकार कर ले, तो उसे चौधरी का बेटा कौन मानेगा?

"हरिया," चौधरी ने उसे सोच में पड़ा देख भाषण ठोंका, "दया-धर्म तो अपने जीवन के अंग हैं. यहां किया गया पुण्य तुझे वहां काम आयेगा और ऊपर भी. आज उन लोगों का वक्त अच्छा नहीं है. कौन कह सकता है कि कल अपना वक्त कैसा आयेगा? अरे, और तो और, तू मेरी ही मिसाल ले. मेरा घर, मेरा खेत सभी कुछ जल कर राख हो गया. एक ही रात में मेरा सभी कुछ लुट गया. वर्ना मैं यहां क्यों आता? तेरा मोहताज क्यों बनता? हरिया! मेरे सीने में कई दरारें पड़ी हैं. फिर भी मैं तुमसे एक फूटी कौड़ी की आशा नहीं रखता. बस तुझसे मेरी सिर्फ इतनी विनती है कि आज यदि तू गरीबों पर दया करेगा तो तेरे बुरे वक्त में कोई तेरे करीब भी खड़ा रहेगा."

हरबंस पर इसका रत्ती भर भी असर नहीं हुआ.

"मैं सोच कर देखूंगा." उसने छोटा-सा उत्तर दिया और कमरे से बाहर निकल गया. (क्रमशः)

भावना और भंवर (पृष्ठ 51 से आगे)

हनुमंत का हाथ छूटा या कौन कह ले गया, इसका भी उसे अनुमान न हो पाया. वह बेहोश हो चुका था.

जब वापस होश में आया, तो मुकेतु एक पलंग पर पड़ा था. सामने ही उसके माता-पिता मौजूद थे. गिरीश, रमेश नीलकांत आदि टीम के साथी भी खड़े थे.

मां ने उसके मस्तक पर हाथ फेरते हुए पूछा, "अब कैसे हो, बेटे?"

"मुझे कुछ नहीं हुआ है, मां."

गिरीश ने बताया, "मुकेतु! आचार्य जी ने और नगरपिता ने भी तुम्हें शाबाशी दी है. तुम्हारी तारीफ सभी दिशाओं में गूंज रही है. तुमने न केवल हनुमंत को बचाया, हमारी टीम को जिता भी दिया."

"ओह!" मुकेतु ने परम संतोष से आंखें मूंद लीं.

गिरीश ने विस्तारपूर्वक बताया कि अपनी उम्र के विद्यार्थियों के बीच, मुकेतु ने तालाब को तैर कर पार करने में सब से कम समय लिया था. सब आश्चर्य में डूब गये थे, क्योंकि तैरते समय उसने हनुमंत का शरीर भी साथ खींचा था.

मुकेतु की आंखों में आनंद के आंसू आ गये. उन आंसुओं के बीच उसने देखा कि सामने हनुमंत भी तो खड़ा है! और उसकी आंखें भी गीली हो उठी हैं— आभार और पश्चात्ताप के आंसुओं से.

31/22, ...नगर, अहमदाबाद-380006

(गुजराती से अनुवाद: मनहर चौहान)

क्रिकेट का बादशाह



क्रिकेट के विश्वविख्यात मैदान लार्ड्स (इंग्लैंड) में एक 'ग्रेस गेट' है, जिस पर लिखा है 'विलियम गिल्बर्ट ग्रेस की स्मृति में.' नीचे सिर्फ इतना और लिखा हुआ है 'महान खिलाड़ी.' सच तो यह है कि ग्रेस क्रिकेट की दुनिया में इतना जाना-पहचाना नाम है कि इस नाम का परिचय बहुत अधिक देने की जरूरत नहीं है. आस्ट्रेलिया के एक दौरे में उनका खेल देखकर लोग इतने अधिक प्रभावित हो गये थे कि एक दिन अखबार में छपा : 'श्री ग्रेस ७ विकेट से जीत गये.' अपने जमाने में ग्रेस को महारानी के बराबर लोकप्रियता मिली हुई थी.

ग्रेस का लंबा-चौड़ा कद था और उन के चेहरे पर घनी काली दाढ़ी रहती थी. कहा जाता है कि उनके हाथ में क्रिकेट का बल्ला चम्मच की तरह दिखता था. ग्रेस को क्रिकेट के सबसे अच्छे बल्लेबाजों में गिना जाता है. वे बहुत अच्छे गेंदबाज भी थे. अपने प्रथम श्रेणी के क्रिकेट जीवन में ग्रेस ने ५४,८९६ रन बनाये पर इससे भी अधिक आश्चर्य की बात है कि उन्होंने २,८७६ विकेट भी लिये. वे जब गेंद फेंकते थे, तो अच्छे से अच्छे बल्लेबाज खराब गेंदों से भी चक्कर में आ जाते थे. लेकिन ग्रेस क्षेत्ररक्षण (फील्डिंग) में भी कम नहीं थे. ८७७ कैच उनके खाते में हैं. प्रथम श्रेणी के मैचों में तीन क्षेत्रों में एक साथ कमाल दिखाने वाले खिलाड़ी क्रिकेट के इतिहास में नहीं हैं. इसीलिए ग्रेस को क्रिकेट का बादशाह कहना सही ही होगा.

ग्रेस ने प्रथम श्रेणी के क्रिकेट में १२६ शतक बनाये. १८९५ में उन्होंने अपना ४७ वां जन्मदिन मनाया और उसी वर्ष एक मैच में सौवां शतक बनाया. ग्रेस इंग्लैंड के काउंटी क्रिकेट में ग्लोस्टरशायर की तरफ से खेलते थे. १६ मई, १८९५ को ग्लोस्टरशायर और सामरसेट के बीच ब्रिस्टल में मैच शुरू हुआ. उन दिनों इंग्लैंड में आम चुनाव हो रहे थे और मौसम भी बेहद ठंडा था. पर लोगों की दिलचस्पी इस बात में ज्यादा थी कि ग्रेस सौवां शतक बना पायेंगे या नहीं. १७ मई को ग्रेस का स्कोर ज्यों-ज्यों १०० के निकट पहुंचता गया, त्यों-त्यों मैदान में लोगों की भीड़ बढ़ने लगी.

ढेर से लोग जमा हुए जा रहे थे. हल्की-हल्की बर्फ भी गिरने लगी थी. ग्रेस जब ९८ पर पहुंचे, तो सैमी वुड्स नाम के बहुत आक्रामक किस्म के तेज गेंदबाज गेंद फेंक रहे थे. सैमी नहीं चाहते थे कि शतक पूरा किये बिना ही ग्रेस आउट हो जायें. उन्होंने एक धीमी गेंद फेंकी. ग्रेस ने चौका लगाया. दर्शकों की खुशी की तो कोई सीमा ही नहीं थी. फील्डरों ने भी बूढ़े खिलाड़ी (क्रिकेट में ४७ वर्ष की उम्र बूढ़ी ही मानी जाती है) के सौवें शतक का ताली बजा कर स्वागत किया.

सैमी वुड्स ने तब यह सोचा कि अब हमें ग्रेस को आउट कर देना है. उन्होंने अपनी तेज गेंदबाजी के चमत्कार दिखाना शुरू कर दिये. पर यह क्या! ग्रेस ने १५०, २०० और २५० को भी पार कर लिया! २८८ पर जाकर वे आउट हुए. लेकिन उनके खेल के बारे में सबसे चौंकाने वाली बात बाद में सामरसेट के विकेटकीपर ने बतायी. उन्होंने बताया कि ग्रेस ने २८८ रनों के दौरान सिर्फ चार गेंदों को बल्ले से बच कर जाने दिया! ग्रेस के खेल की इससे अच्छी मिसाल और क्या हो सकती है!

ग्रेस के बारे में बहुत सारे किस्से मशहूर हो गये थे. वे पेशे से डॉक्टर थे. क्रिकेट तो इतनी अधिक खेलते थे, फिर भी वे अपनी प्रैक्टिस के लिए समय निकाल लेते थे. वे अपने मरीजों में भी लोकप्रिय थे. इसीलिए डब्ल्यू. जी. का नाम आज भी मन में श्रद्धा जगाता है.*

□ विनोद भारद्वाज
दिनमान, 10 दरियागंज, नयी दिल्ली-110002

अण्डे (पृष्ठ १९ से आगे)

बातें फिर सुन लीं. माँ भोजन करने का आग्रह कर रही थी और पिता जी थे कि उठ नहीं रहे थे. अगले दिन वह बहुत जल्दी अपने दफ्तर चले गये.

मदन ने माँ से पूछा, "माँ, पिता जी इतने उदास-से क्यों लग रहे हैं?"

"उन का इकलौता लड़का जुआ खेले, चोरी करे, इस आघात ने उन्हें हिला दिया है." माँ ने आँसू पोंछते हुए बताया.

मदन सामने खड़ा न रह सका. उसको अपने-आप से ही नफरत हो गयी. पिता जी से अवश्य कहा था उसने कि आइंदा ऐसे काम वह कदापि नहीं करेगा, लेकिन ..... पिता जी ने उस पर यकीन नहीं किया है. ठोस सबूत रखना होगा.

चार दिन गुजर गये.

रोज की तरह पिता जी सुबह का अखबार पढ़ने बैठे थे. मदन उनके नजदीक जा खड़ा हुआ. पिता जी ने उसे देखकर भी न देखा. मुंह से एक शब्द भी न बोले वह. मदन उनके कंधे पर सिर रखकर रो उठा, "पिता जी! मुझ पर यकीन करिए, पिता जी! देखिए, मैं एक रुपया कमा कर लाया हूं."

"कमा कर लाये हो? कहां से?"

"घर में पुराने अखबार पड़े हुए थे. मैंने उन्हें मोड़ कर, लेई से चिपका कर, लिफाफे तैयार किये. फिर बाजार में जाकर बेचे. एक रुपया मिला."

"ओह, मेरे बेटे!" उन्होंने मदन को खींच कर गोद में भर लिया. उनकी आँखों में खुशी के आँसू आ गये.

६-अवनिका पार्क, कामूर, अहमदाबाद-380001
(अनुवादक : मनहर चौहान)

आम के आम . . .

(पृष्ठ ५१ से आगे)

परिचित नहीं हैं. इन खिलाड़ियों ने अपने देश का नाम संसार भर में ऊंचा किया किया है.

अब तक आपको यह तो पता चल ही गया होगा कि खेलकूद की कितनी महिमा है. हो सकता है कि आपके सामने यह समस्या हो कि कहां जाकर खेलें. तो लीजिए हम कुछ जगहों के नाम बताते हैं.

आओ खेल के मैदान में चलें

पटियाला में खिलाड़ियों का तीर्थ स्थान है, जिसे नेताजी सुभाष राष्ट्रीय संस्थान कहते हैं. इसमें अलग-अलग खेलों के प्रशिक्षक (कोच) तैयार होते हैं. देश के अलग-अलग भागों में इसकी कई शाखाएं भी हैं. वहां जाकर आप जिस खेल में चाहें हिस्सा ले सकते हैं. दिल्ली के नेशनल स्टेडियम का नाम तो आपने सुना ही होगा. १९५१ में पहले एशियाई खेल यहीं हुए थे. यहां नेताजी सुभाष राष्ट्रीय खेलकूद संस्थान की एक शाखा है.

दो-तीन महीने पहले की बात है. एक दिन मैं घूमता-घामता शाम के समय इस स्टेडियम में पहुंच गया. उन दिनों स्कूलों में गर्मियों की छुट्टियां होने वाली थीं. देखा, सैकड़ों बच्चे दाखिले का फार्म भर रहे हैं. पूछताछ करने पर मालूम हुआ कि ये लड़के अलग-अलग खेलों में हिस्सा लेना चाहते हैं. यहां अलग-अलग आयु वर्ग के खिलाड़ियों को सिखाया जाता है और बहुत कम फीस ली जाती है. यहां पर कोई बड़ी सिफारिश की भी जरूरत नहीं होती. आप स्टेडियम में जाइए, एक फार्म भरिए और कल से खेलना शुरू कर दीजिए. मैदान मुफ्त, कोच (प्रशिक्षक) मुफ्त और काफी हद तक खेल का साज-सामान भी मुफ्त. सिर्फ आपको यह तय करना है कि आपकी दिलचस्पी किस खेल में है. सुबह चाहें तो सुबह और शाम को चाहें तो शाम को खेलने जा सकते हैं.



(ऊपर) मुक्केबाजी के अविजित चैंपियन मोहम्मद अली जो पचास से अधिक मुकाबलों में सिर्फ दो बार हारे हैं.

कुछ खेलों में तो बिल्कुल फीस ही नहीं है. जैसे भारोत्तोलन (वेटलिफ्टिंग) और फुटबाल आदि. एथलेटिक, बास्केट-बाल, वालीबाल, हाकी, जिमनास्टिक में सिर्फ दो रुपये महीना और क्रिकेट में १० रुपये महीना फीस है. यदि आप जी-जान से खेलते रहे और आपने खेल में अच्छी तरक्की भी कर ली तो न केवल आपकी फीस माफ की जा सकती है, बल्कि छात्रवृत्ति तक मिल सकती है.

देश के जिन भागों में नेताजी सुभाष राष्ट्रीय खेलकूद संस्थान की शाखाएं हैं, उनके नाम इस प्रकार हैं: गौहाटी, पटना,

मद्रास, हैदराबाद, त्रिपुरा, जालंधर, दिल्ली, बंगलौर, जयपुर, मेरठ, भोपाल, गांधीनगर, नागपुर, जम्मू और कश्मीर, इम्फाल, पंजिम, अगरतला, चंडीगढ़ और कटक.

यह तो हुई शहरों की बात. छोटे शहरों और कस्बों में नेहरू युवक केंद्रों की स्थापना की गयी है. गांवों में खेलकूद को लोकप्रिय बनाने के अखिल भारतीय ग्रामीण खेलों का भी आयोजन किया जाता है, जिनमें ज्यादातर उन्हीं खेलों को शामिल किया जाता है, जो गांव-गांव में बहुत लोकप्रिय होते हैं, जैसे खो-खो, कबड्डी, कुश्ती, रस्साकशी, वालीबाल, तैराकी, जिमनास्टिक आदि. इन खेलों के आधार पर कुछ होनहार खिलाड़ियों को चुन लिया जाता है. उन्हें छात्रवृत्तियां दी जाती हैं. उनके लिए विशेष प्रशिक्षण शिविर (कोचिंग कैंप) लगाये जाते हैं.

हरिचंद का नाम तो हम आप सभी जानते ही हैं. वह गांव से ही आये थे. उन्होंने नया एशियाई रिकार्ड तो बनाया ही, मांट्रियल ओलिंपिक में उन्होंने दस हजार मीटर की दूरी को २८ मिनट ४८.७२ सेकंड में पूरा किया था. अब तो हाकी में भी गांव के कई खिलाड़ी तेजी से प्रकाश में आ रहे हैं.

इसी तरह अब महिलाओं को भी राष्ट्रीय खेलकूद प्रतियोगिताओं का आयोजन किया जाता है.

कुल मिलाकर यह कि खेलकूद में बहुत कुछ है. पैसा है, प्रतिष्ठा है. अगर आप राज्य या राष्ट्रीय स्तर के खिलाड़ी बन जाते हैं तो बहुत-सी कंपनियां और बहुत से सरकारी विभाग आपको हाथों-हाथ



लाला अमरनाथ (दाएं) के साथ लेखक.

उठा लेते हैं. कौन नहीं जानता कि हाकी के जादूगर ध्यानचंद हाकी खेलते-खेलते एक मामूली सिपाही से मेजर बन गये, मिल्खा सिंह दौड़ते-दौड़ते एक मामूली सिपाही से पंजाब के खेल विभाग के अतिरिक्त निदेशक (एडिशनल डायरेक्टर) बन गये, विजय अमृतराज लान टेनिस खेलते-खेलते और श्री सतपाल कुश्ती लड़ते-लड़ते लखपति हो गये.

'खेल' और 'खिलाड़ी' इन दो शब्दों की महानता को बहुत कम लोग जानते हैं. खेल आपको अनुशासन, टीम-भावना, सहयोग, प्रेम, त्याग, सहनशीलता और विषमताओं का पाठ सिखायेगा और जब आप स्वयं खिलाड़ी बन जायेंगे तो आप लोगों को ये पाठ सिखायेंगे.

कल करे सो आज कर. अगर आपको खेलकूद में हिस्सा लेना ही है तो फिर देर किस बात की. दुनिया के जो देश आज खेलकूद में बहुत आगे हैं, वहां छोटी-छोटी सी उम्र में बच्चे खेलना शुरू कर देते हैं. तभी तो कहते हैं कि जब तक नींव मजबूत नहीं होगी तब तक देश खेलकूद में तरक्की नहीं कर सकता और देश की नींव देश के बच्चे ही होते हैं.

विनयनगर, नयी दिल्ली-110003

यह भी क्रिकेट है

एक हिट ९३ रन

सन् १८९४ में इंग्लैंड की दो टीमों के बीच एक दिन का मैच हुआ. टीमों के कप्तान थे पैंकहम ग्रशम और कैंपबेल एल्विन. पहली पारी में एल्विन की टीम १२९ रन बनाकर आउट हो गयी. समय बचा सिर्फ ५५ मिनट. अब पैंकहम की टीम को जीतने के लिए इन ५५ मिनटों में १३० रन बनाने थे और उनकी टीम ने वह मैच जीत भी लिया.

हुआ यह कि एक बल्लेबाज ब्राउन ने ऐसा जोरदार शाट मारा कि गेंद उछलकर पेड़ पर अनेक शाखों में जा अटकी. उस पेड़ की जड़ तो बाउंड्री से बाहर थी, मगर वह फैलने वाली शाख मैदान के अंदर थी. इसलिए गेंद भी मैदान के अंदर थी. इस कारण छक्का दिया नहीं जा सकता था. चूंकि गेंद दिख रही थी, इसलिए वह खोयी हुई भी नहीं थी.

अब एक आदमी पेड़ पर चढ़ा गेंद उतारने को, इधर बल्लेबाज रन बटोरने में लगे रहे. जब तक गेंद आयी, तब तक ब्राउन ने ९३ रन बना लिये. अभी आध घंटे का समय बचा था. पैंकहम की टीम ने ३७ रन और बनाकर मैच जीत लिया.

सबसे लंबा टेस्ट मैच

सबसे लंबा टेस्ट मैच १९३८ में डर्बन में इंग्लैंड और [illegible] के बीच खेला गया था. आने वाली टीम इंग्लैंड की थी.

तब टेस्ट मैच पांच दिन से अधिक नहीं होते थे लेकिन यह मैच दस दिन तक चलता रहा. फिर भी सभी खिलाड़ी आउट नहीं हुए

□ अजय कुमार 'पूरन'

इन्हें याद करो

पांच शिशु गीत

१. छुक-छुक भाग रही है रेल,
सचमुच बड़े मजे का खेल।
चुन्नू बाबा हैं इंजन,
हम सब इनके धक्कम पेल।

२. बातूनी हैं तोते राम,
चुप रहने के लेते दाम।
अक्सर सोने वालों की,
कर देते हैं नींद हराम।

३. वह पप्पी की बिल्ली है,
सचमुच बड़ी चिबिल्ली है।
कभी भागती अमृतसर,
कभी भागती दिल्ली है।

□ जहीर कुरेशी

४. आ रे, चंदा मामा, आ जा,
ताजा ताजा बिस्कुट खा जा।
मुझको अपने भेद बता जा,
किसने तुझे बनाया राजा।

५. चल रे चल, लकड़ी के घोड़े,
वरना अभी लगेंगे कोड़े।
किसने तेरे कान मरोड़े,
रूठ गया क्यों अरे निगोड़े।

□ कन्हैया लाल 'मत्त'

टीचर जी बोर्ड पर गणित का प्रश्न हल कर रहे थे. राजेश सावधानी से प्रश्न को कापी पर उतार रहा था. तभी कागज का एक हवाई जहाज उसकी

हवाई जहाज की मार

□ सत्यस्वरूप दत्त



गोदी में आकर गिरा. उसपर छोटे-छोटे अक्षरों में लिखा था, 'किताबी कीड़े, कुछ पता भी है, आज से नटराज में 'एक से बढ़ कर एक' पिक्चर लग रही है.'

राजेश पढ़कर मुस्कराया. यह और किसी का नहीं, अशोक का काम है. वही फिल्मों के लगने की सूचना कागजी हवाई जहाजों द्वारा सब तक पहुंचाता है. जनसेवा की भावना यहां तक है कि दो-तीन दिन में चौसठ पन्नों की कापी के हवाई जहाज, नावें या चिड़ियां बना डालता है.

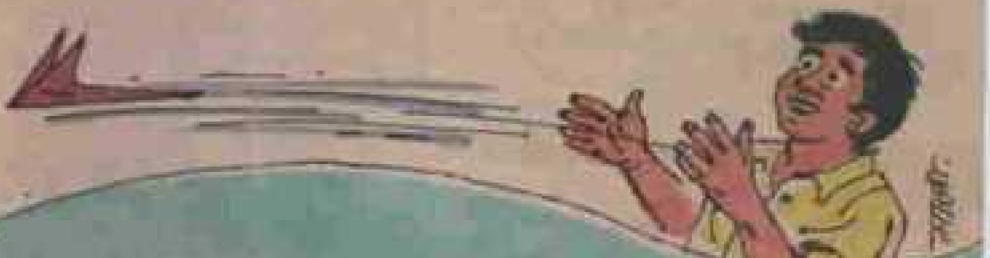
राजेश ने फिर से ब्लैक बोर्ड पर ध्यान लगाने की कोशिश की. दो-तीन पंक्तियां ही लिखी थी कि एक और हवाई जहाज उसकी कापी पर आ गिरा. लिखा था —'कुत्ते की दुम टेढ़ी की टेढ़ी! किताबी कीड़े को आदमी बनाना टेढ़ी खीर है. भाई मेरे, यह तो पूछा होता कि फिल्म के हीरो-हीरोइन कौन हैं?'

'धत् तेरे की! किसकी दुम टेढ़ी है?'

राजेश को कुछ झुंझलाहट-सी हुई. वह प्रश्न समझना चाह रहा था और अशोक उसे किताबी कीड़ा समझ रहा था. यदि किताबों से इतना परहेज है तो स्कूल क्यों आया जाये. इससे तो अच्छा है किसी पिक्चर हाल के सामने बिस्तर बिछा लो और टकटकी बांधकर हीरो-हीरोइन का चौखटा देखो.

देखने हैं. दूसरों से कुछ लेना है तो उनकी अच्छाई ग्रहण करनी है."

"मैं बुराई ग्रहण नहीं करना चाहता मम्मी. मैं चाहता हूं कि अशोक की यह बुराई दूर हो. उसके भेजे में घुसे कि वह कागज और समय दोनों नष्ट कर रहा है. मैं यह बात उसकी मम्मी से कहना चाहता हूं."



राजेश प्रायः आश्चर्य में डूब जाता है कि अशोक की मम्मी उसे हर दूसरे-तीसरे दिन नयी कापी के पैसे कैसे दे देती हैं? पूछती नहीं कि नयी कापी का क्या हुआ? दो दिन में वह भर कैसे गयी? यदि भरी गयी तो हर सप्ताह दो-तीन कापियां कैसे भरी जाती हैं?

एक शाम को राजेश ने इस बात की चर्चा अपनी मम्मी से की.

"मम्मी, तुम मुझे टोकती रहती हो कि मैं कागज बरबाद करता हूं. इस शहर में मुझसे भी बढ़कर एक महापुरुष है. तुम अशोक को नहीं जानतीं! तीन दिन में नयी कापी को हवाई जहाज बनाकर उड़ा देता है."

"तुमसे मैंने कितनी बार कहा है कि यदि दूसरों को देखना है तो उनके गुण

"दूसरों की बुराई देखने और उसे दूर करने का तुमने ठेका ले लिया है? तेरी सब बुराइयां दूर हो गयी हैं क्या? तेरा कोई साथी मेरे पास आकर तेरी शिकायत करे तो तुझे कैसा लगेगा?" मम्मी ने एक सांस में कई सवाल कर डाले.

राजेश ने सोचा, निश्चय ही वह इसे चुगलखोरी कहेगा और पसंद नहीं करेगा. अशोक की मम्मी से यह बात कहना भी चुगलखोरी होगी. इसलिए अशोक की मम्मी से कुछ नहीं कहना. फिर वह कैसे अशोक को समझाये.

जो भी हो, चुगलखोरी ठीक नहीं. इससे तो अच्छा है कि अशोक से सीधे-सीधे बात की जाये, लेकिन मौका देखकर.

आखिरी पीरियड के दो-तीन आखिरी मिनट थे. एक 'हवाई जहाज' फिर राजेश

की गोदी में आकर गिरा—"टाटा! अच्छा तो हम चलते हैं!"

तभी घंटी बज गयी. टीचर जी के निकलते ही राजेश चीख उठा—"अरे, मर गया—उफ!"

दो-तीन लड़के राजेश की ओर झपटे—"क्यों, क्या हुआ?"

"खून! खून! खून!"

सारी क्लास राजेश के निकट सिमट आयी. "क्या हुआ? कैसे हुआ?"

"सब अशोक की कृपा है. नुकीले पत्थर के साथ हवाई जहाज फेंका, पत्थर गड़ गया. यह देखो पत्थर!"

"बाप रे! इतना नुकीला पत्थर!"

"अरे! बहुत खून बह रहा है. टीचर जी को बुलाओ."

अशोक के चेहरे का रंग उड़ गया. टीचर जी आयेंगे, यह खून देखेंगे, किंतु... किंतु... "मैंने पत्थर एकदम नहीं फेंका. कागज का हवाई जहाज भर फेंका था. उसमें खून!" अशोक की आंखें आश्चर्य से फटी जा रही थीं.

"यह अशोक की नयी शरारत है. रोज कागज का जहाज फेंकता था. आज पत्थर के साथ फेंका है." एक लड़के ने कहा.

"ऊपर से कह रहा है कि मैंने कागज का जहाज फेंका था, पत्थर नहीं. फिर यह पत्थर कहां से आया?" दूसरे ने व्यंग्य कसा.

"यह ऐसे नहीं मानेगा. टीचर जी को बुलाओ." पहलेवाला लड़का बोला.

"जाने दो. अब जो हो गया, वापस तो होने से रहा." राजेश बोला और वह अमित के साथ स्कूल से बाहर निकल रिक्शे की ओर बढ़ गया.

"विश्वास करो राजेश, मैंने पत्थर कतई नहीं फेंका. भगवान कसम." अशोक ने रिक्शे पर बैठते हुए राजेश से कहा.

"रहने दो. तुम्हारे कसम खाने से राजेश की चोट कम थोड़ी ही हो जायेगी. बहा हुआ खून उसे वापस तो नहीं मिल जायेगा." रिक्शा पर राजेश के साथ बैठते हुए अमित ने कहा.

"टीचर जी से तो नहीं कहा, किंतु इस हरकत की खबर इसके पापा को अवश्य करनी चाहिए." पास खड़े एक लड़के ने सुझाया.

"नहीं तो इसके हौसले और बढ़ जायेंगे." दूसरे लड़के ने बात पूरी की. "बमबारी और जोर-शोर से होगी. एक-एक को अस्पताल के दर्शन होंगे."

●

अशोक को लगा कि अनेक तूफान उसके दिमाग में घुमड़ रहे हैं. आरोपों के तूफान. साथियों की घृणा से सनी दृष्टियों के तूफान. किंतु उसकी समझ में कुछ नहीं आ रहा था. यह सब कैसे हुआ? राजेश को चोट कैसे लगी?

उसने तो कागज का ही जहाज फेंका था. तो क्या पत्थर किसी और ने फेंका? किसी ने उसके कंधे पर रखकर बंदूक चलायी है? यह किससे बदला लिया गया है? राजेश से या उससे? सोचता-सोचता वह घर चला गया.

अगले दिन की बात है. राजेश ने दरवाजा खोला तो देखा, सामने अशोक खड़ा था.

"आओ, आओ! मुझे विश्वास था कि तुम आओगे, पर यह नहीं पता था कि इतनी सुबह आओगे." राजेश ने अशोक का हाथ पकड़कर उसे भीतर खींचते हुए कहा.

"मुझे दुख है राजेश कि कल तुम्हें

चोट आ गयी," अशोक ने बैठते हुए कहा—"लेकिन मुझ पर विश्वास करो, पत्थर मैंने नहीं फेंका. तुम्हें चोट पहुंचाने का खयाल कभी मेरे दिमाग में नहीं आया. यह किसी और का काम है. किसी और ने मेरे नाम पर तुमसे दुश्मनी निकाली है."

"किंतु अपराध तुमसे हुआ है बेटे." राजेश के पापा ने तभी कमरे में आते हुए कहा. आश्चर्यचकित अशोक उठ खड़ा हुआ, "नमस्ते अंकल!"

राजेश के पापा मुस्कराये, "बैठो,



बैठो. खड़े होने की जरूरत नहीं."

"अंकल, आपको राजेश ने अपने मन का संदेह बताया है, पर यह सच नहीं है. मैं समझ नहीं पा रहा कि किस तरह सिद्ध करूं कि पत्थर मैंने नहीं मारा." अशोक ने उत्तेजित स्वर में कहा.

"मुझे राजेश ने सब बता दिया है. तुम्हारा अपराध दूसरा है. पत्थर मारने से कहीं बड़ा." राजेश के पापा बोले.

"मैं कुछ समझा नहीं." अशोक का आश्चर्य और बढ़ गया.

"वही तो मैं समझा रहा हूं. यह अपराध केवल तुम्हारा नहीं है. बड़े लोग भी ऐसा करते हैं. यह अपराध है कागज बरबाद करने का. उसका सही उपयोग न करने का.

"आज जब कागज की कमी है, उसको विदेशों से मंगाना पड़ रहा है. ऐसे में कोरे कागज के हवाई जहाज बनाना अपराध नहीं तो क्या है?

"मैं यह नहीं कहता, खेलना बुरा है. किंतु नाव, हवाई जहाज, चिड़ियां—लिखे हुए कागजों और पुराने अखबारों से भी बनायी जा सकती हैं. और वह भी क्लास में नहीं. क्लास से बाहर. क्लास में यह खेल कागज के साथ-साथ समय की भी बरबादी है, अपने समय की, अपने साथियों के समय की."

इतना कहकर राजेश के पापा ने सामने के टेबल से कुछ कापियां उठायीं. "यह देखो, इनमें से कुछ कापियां राजेश की हैं, जिनमें उसने कागज के एक ओर लिखा है. जो रफ काम होता है उसे मैं और राजेश दूसरी ओर करते हैं. राजेश की मम्मी भी धोबी और दूध वाले का हिसाब इसी पर करती हैं. यह मेरी आफिस के रफ कागजों की कापी है—यानि टाइप किये हुए पृष्ठों का पिछला भाग. और यह है सिनेमा या नयी दुकान खुलने के विज्ञापनों से बनायी हुई कापी. प्रायः इन विज्ञापनों का पिछला भाग कोरा रहता है."

अशोक को विश्वास नहीं हो रहा था. वह सच में कागज, समय और राष्ट्र के साधनों को बरबाद करता है! इस विषय पर उसने सोचा तक नहीं. राजेश को एक-दो बार उसने ऐसी कापी पर काम करते देखा था और मन ही मन उसे कंजूस-मक्खीचूस कहा था.

"एक क्षमा मुझे भी मांगनी है तुमसे."



विम्बल्डन १९७७

इस बार विम्बल्डन प्रतियोगिता में दो विशेष बातें हुईं. एक तो अमरीका की ट्रेसी ऑस्टिन, जो 14 वर्ष की उम्र में ही विम्बल्डन प्रतियोगिता में भाग लेने का गौरव पा गयी. ट्रेसी ने हालैंड की श्रीमती वालिस अर्नोल्ड जैसी खिलाड़िन को हराया था, मगर तीसरे दौर में अमरीका की पिछली विम्बल्डन चैंपियन क्रिस एवर्ट से हार गयी. दूसरी विशेष बात थी कि ब्रिटेन की 31 वर्षीया वर्जीनिया वाडे 16वें प्रयास में महिला एकल प्रतियोगिता जीत पायीं. वह सबसे अधिक उम्र में यह खिताब पाने वाली महिला हैं.

छाया : एम. एस. जयपाल

ऊपर : श्रीमती निरुपमा मांकड़. वह लान टेनिस की एशियाई महिला चैंपियन रह चुकी हैं. किसी जमाने में वह लान टेनिस की सर्वश्रेष्ठ भारतीय खिलाड़िन थीं. विम्बल्डन प्रतियोगिता में भी भाग लिया था. एशियाई प्रतियोगिता (क्वालालम्पुर) में विजयी हुई थीं. प्रसिद्ध क्रिकेट खिलाड़ी अशोक मांकड़ की पत्नी हैं.

दायें : ट्रेसी ऑस्टिन, विम्बल्डन के १०० वर्षों के इतिहास में सबसे कम आयु की खिलाड़िन.



राजेश ने कहा.

"तुम्हें क्षमा मांगनी है और मुझसे!" अशोक को आश्चर्य हुआ.

"हां, कल जो हुआ, उसके लिए. तुमने कागज का ही हवाई जहाज फेंका था. चाबी का नाटक मेरा और लाल स्याही का था. तुम्हें तुम्हारी गलती का एहसास कराने के लिए मैंने ऐसा किया. मैं तुम्हारा मित्र हूं. मेरा कर्तव्य है कि तुम्हारा अहित न होने दूं, तुम्हारा पैसा और समय बरबाद न होने दूं. एक-दो बार मैंने तुमसे कहा भी था. किंतु तुमने मेरी बात को हवाई जहाज पर उड़ा दिया. टीचर जी से या तुम्हारे पापा से कहता तो वह चुगली होती. अपनी बात तुम तक पहुंचाने का यही उपाय मुझे सूझा."

"ओह! यह सब तुम्हारा खेल था. वाह! मेरे इतने पुराने खेल को तुम्हारे एक ही दिन के खेल ने बराबर कर दिया. मैं सोच भी नहीं सकता था कि तुम मेरे इतने गहरे मित्र हो." अशोक का स्वर भर आया था. उसकी आंखों में धन्यवाद था, सच्चे मित्र को पाने का गर्व था. *

19, एम-रोड बिष्टुपुर, जमशेदपुर-831001

एक चित्रकथा

तुम डाल डाल हम पात पात



(विदेशी भाषा प्रकाशन गृह, मास्को के सौजन्य से)



अगला अंक ✱

पराग सितंबर १९७७

● प्रसिद्ध नाटककार विष्णु प्रभाकर का एक अनूठा एकांकी 'मामी आ गयी.'

● अपनी रोजी-रोटी कमाने वाले ये साहसी बच्चे—श्रमजीवी बच्चों की कहानी उन्हीं की जबानी—चित्रों सहित.

● 'हांगकांग के रंगबिरंगे त्योहार'—रंगीन चित्रों के साथ.

● प्रसिद्ध फिल्म अभिनेत्री मौसमी चटर्जी की दिलचस्प चिट्ठी.

● 'बहत्तर साल का बच्चा' की ठहाकेदार आठवीं किस्त.

साथ में

● 'डाकबाबू का पार्सल', 'प्रेतनी का रहस्य', 'भूतों का डेरा', 'घूंघट', 'पार्वती की सूझ', 'बेटी का ब्याह और मां के फेरे', 'बल और बुद्धि', तथा 'पत्थर और सोना' जैसी आठ रोचक और मजेदार कहानियां.

● चित्रकथा, छोटू-लंबू, चिन्दू अपने नये रंग-ढंग में, तथा सभी स्तंभों में रोचक सामग्री.

हार में जीत

(पृष्ठ ७ से आगे)

दोनों टुकड़ी के सभी खिलाड़ी मारे खुशी के उछलने लगे. उनकी हार जीत में जो पलट गयी थी!

जबकि नयन के खिलाड़ी और सहपाठी बिल्कुल निराश हो गये. सिर्फ दो व्यक्ति ऐसे थे, जिन्हें कोई निराशा नहीं हुई थी—नयन के खेल-शिक्षक और शाला के प्रधान आचार्य.

नयन की दिलेरी, सच्चाई और खेल-भावना ने प्रतियोगी कप्तान को दंग कर दिया था. उसने तो नयन को बाहों में ही भर कर ऊपर उठा लिया! उसने और उसके साथियों ने भी जोर-जोर से नयन का जय जयकार किया. इस जयकार के उन नारों ने नयन के साथियों की निराशा को भी दूर भगा दिया. उनके चेहरों पर भी रौनक छा गयी.

सब एक स्वर से नयन की नेकी, खेल-भावना, उदारता और सच्चाई की तारीफ करने लगे. प्रधान आचार्य ने उसे बड़े प्रेम से गले लगा लिया. खेल-शिक्षक ने तो नयन को अपने कंधों पर ही बिठा लिया.

खेल के सारे मैदान में और अगले दिन समूची पाठशाला में, हर आदमी की जुबान पर एक ही चर्चा थी—कि वाह! नयन की खेल-भावना के क्या कहने!

इस प्रकार नयन की हार एक सुंदर और जबर्दस्त जीत में बदल गयी.

११–हुंगरशी नगर, नरसोल रोड,
अहमदाबाद–380007

(गुजराती से अनुवाद : मनहर चौहान)